सदाचार सूक्ति काव्य
एवं
आध्यात्मिक कविताएँ

रचयिता

आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज

आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज का जीवन परिचय

पूर्व नाम	- पारसचंद जैन
पिता जी	- श्री शिखरचंद जैन
माता जी	- श्रीमती मायाबाई जैन
जन्मतिथि	- ११.९.१९६७, भाद्र शु. अष्टमी
जन्म स्थल	- फुटेरा कलाँ, जिला- दमोह
बचपन बीता	- पथरिया, जिला- दमोह (म.प्र.) में
शिक्षण	- बी.ए. (प्रथम वर्ष) डिग्री कॉलेज, दमोह (म.प्र.)
ब्रह्मचर्य व्रत	- १९.१२.१९८४, अतिशय क्षेत्र, पनागर(म.प्र.)
सातवीं प्रतिमा	- १९८५, सिद्धक्षेत्र, अहारजी
क्षुल्लक दीक्षा	- ८.११.८५, सिद्धक्षेत्र, अहारजी
ऐलक दीक्षा	- १०.७.१९८७, अतिशय क्षेत्र, थूवोनजी
मुनि दीक्षा	- ३१.३.१९८८, सिद्धक्षेत्र, सोनागिरजी, महावीर जयन्ती सन् १९८८
दीक्षा गुरु	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज
आचार्यपद	- २५.०१.२०१५ (माघ शुक्ल षष्ठी) को (समाधि पूर्व आचार्यश्री सीमंधरसागर जी द्वारा इंदौर में)
कृतियाँ व रचनाएँ	- धर्म-भावना शतक, जैनागम-संस्कार, तीर्थोदय-काव्य, परमार्थ-साधना, बचपन का संस्कार, सम्यक्-ध्यान शतक, आर्जव-वाणी, पर्यूषण-पीयूष, आर्जव-कविताएँ, जिनवर-स्तुति, साम्य-भावना, आगम-अनुयोग, जैन शासन का हृदय, लोक कल्याण (षोडसकारण) विधान, सदाचार सूक्ति-काव्य।
पद्यानुवाद	- गोमटेशथुदि, जिनागम-संग्रह (वारसाणुवेक्खा, इष्टोपदेश, समाधितन्त्र, द्रव्य-संग्रह), तत्त्वसार एवं प्रश्नोत्तर-रत्नमालिका।

सदाचार सूक्ति काव्य

एवं

आध्यात्मिक कविताएँ

रचयिता
आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज

कृति – **सदाचार सूक्ति काव्य**
एवं
आध्यात्मिक कविताएँ

कृतिकार – आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज

पावन संदर्भ – पावन वर्षायोग सन् 2020
श्री 1008 भ.पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र, क्षेत्रपाल,
ललितपुर (उ.प्र.)

अर्थ सहयोगी – 1.श्रीमान् विजयकृष्ण अजय जैन (अज्जू), महावीर रोड लाइन्स, तालबेहट, ललितपुर (उ.प्र.) 7007043259
2.श्री अजय जैन, जैन मार्बल एण्ड सेनीटरीवेयर, रेवाड़ी (हरियाणा)9416237232
3.श्री कीर्ति जैन, अर्चित जैन, तेवरी,
जिला–कटनी 9203259764

प्रथम संस्करण – 2020

प्रतियाँ – 1000

प्राप्ति स्थान – भगवान महावीर आचरण संस्था समिति
एम 8/4, गीतांजली काम्पलैक्स,
कोटरा सुलतानाबाद, भोपाल (म.प्र.)–462 003
मो. : 7222963457, 9425601161, 7049004653, 9425601832, 9425011347

मुद्रक – पारस प्रिंटर्स, भोपाल
207/जी–10, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन–1
एम.पी.नगर, भोपाल
फोन : 0755–4260034, 9826240876

मूल्य – स्वयं पढ़ें, दूसरों को पढ़ाएँ

आद्यमिताक्षर

–डॉ. अजित कुमार जैन

जहाँ एक ओर वर्ष 2020 के मार्च माह में कोरोना महामारी का भारत देश में प्रवेश आरम्भ हो रहा था वहीं दूसरी ओर गुरुवर आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ का विहार सोनागिरजी सिद्धक्षेत्र से करगुवांजी अतिशय क्षेत्र, झांसी की ओर हो रहा था। आचार्यश्री आर्जवसागर महाराज ससंघ का अल्प प्रवास करगुवांजी, झांसी, बबीना होकर अतिशय क्षेत्र, पवाजी हुआ। प्रशासन की ओर से सभी तीर्थक्षेत्रों में लॉकडाउन के आदेश जारी होने जा रहे थे। जैसे ही ससंघ का विहार पवाजी से तालबेहट (ललितपुर, उ.प्र.) की ओर हुआ वैसे ही पूरे देश में लॉकडाउन लागू हो गया। अतः आचार्यश्री आर्जवसागर महाराज ससंघ का प्रवास तालबेहट में हो गया।

कोरोना संक्रमण रोकने के लिए शासन द्वारा लॉकडाउन के अंतर्गत सभी सार्वजनिक स्थल (मंदिर आदि), व्यवसाय, संस्थान, प्रतिष्ठान आदि के साथ–साथ सभी गतिविधियाँ रोक दी गई थीं। जनसामान्य को, आवश्यक सेवाएं छोड़कर, केवल घरों में रहने का कठोर आदेश था। कोरोना संक्रमण से बचने के लिए लागू निषेधाज्ञा के कारण गुरु वचनों से वंचित साधर्मी बंधुओं में से किसी ने आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज को निवेदन किया कि लगभग सभी लोग सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं, अतएव इस मीडिया के माध्यम से गुरु–आशीष वचनों को देश–विदेश

के भक्तों को आसानी से पहुँचते रहेंगे। आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ने कोरोना के वातावरण से आकुल-व्याकुल भक्तों पर करुणा करते हुए ''सदाचार सूक्ति काव्य'' एवं ''आध्यात्मिक कविताएँ'' आरम्भ कीं।

गुरुवर आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ने ''सदाचार सूक्ति काव्य'' में व्रतियों के साथ-साथ विद्वानों एवं साधर्मी बंधुओं के स्वाध्याय एवं स्वस्थ्य चिंतन हेतु धार्मिक पृष्ठभूमि के विभिन्न गूढ़तम एवं जटिल विषयों जैसे आद्य (देव, गुरु, शास्त्र), धर्म-अध्यात्म, सद्गुरु, शिक्षा, प्रकृति, आहारौषध, राज्यादर्श, चारित्र, तप-साधना, ध्यान, सल्लेखना आदि को सरल भाषा की काव्यात्मक शैली में प्रशस्ति पूर्वक पद्यमय रचना की है।

इन रचनाओं का आधार भक्तों को मानसिक शांति एवं स्थिरता के साथ-साथ संबल देना था, जिससे घर का वातावरण सामान्य हो सके और आत्म-विश्वास जाग सके। आचार्य महाराज ने सर्वप्रथम अप्रैल 2020 में 'कोरोना' पर कविता रची कि जिससे जनमानस में जीवन के प्रति उत्साह उमड़ा, तब गुरु-महाराज ने देश के महानगरों एवं विदेश के लोगों में नौकरी खोने के कारण घर लौटने की बैचेनी के परिपेक्ष्य में 'रहो अपने देश में', 'अपने घर आओ', 'कृषि करो या ऋषि बनो', 'गम नहीं' तथा स्वाश्रित बन' के विषय में संबोधन दिया। इसी तारतम्य में आचार्य महाराज ने 'जिनेन्द्र प्रभु का दर्श', 'मोक्ष मिले अरमान', 'काश', 'निज', 'जिन', 'निज का ध्यानी', 'जगत् शान्ति', 'जिन से निज', 'दिगम्बर' एवं 'स्वार्थी अतिथि' आदि शीर्षक सह रचना करते हुए अपने भावों को व्यक्त किया।

हम सभी भक्तजनों पर परम पूज्य वात्सल्यमयी गुरुवर आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज का यह परम उपकार एवं करुणामयी आशीर्वाद है कि उनके द्वारा कोरोना महामारी के काल में हम सभी के कल्याण हेतु ''सदाचार सूक्ति काव्य'' एवं ''आध्यात्मिक कविताओं'' नामक अनूठे ग्रंथ की रचना की गई है। हम सभी उनके कृतज्ञ हैं और चिरकाल तक ऋणी बने रहेंगे।

इस कृति के प्रकाशन में अपने द्रव्य का सदुपयोग करने वाले पुण्यार्जक श्रीमान् विजयकृष्ण जैन अजय जैन (अज्जू) सहसम्पादक, हजारिया टाइम्स, तालबेहट; श्रीमान् अजय जैन रेवाड़ी एवं श्रीमान कीर्ति जैन अर्चित जैन, तेवरी, कटनी वालों के लिए धन्यवाद ज्ञापित करते हैं। साथ ही, अतिशीघ्र प्रिंटिंग के कार्य को करके सौंपने वाले पवन जैन, पारस प्रिंटर्स भी धन्यवाद के पात्र हैं।

इत्यलं।

भ.महावीर निर्वाण दिवस 2020

संपादक,

भाव-विज्ञान पत्रिका, भोपाल

सदाचार सूक्ति काव्य
एक दृष्टि

–इंजीनियर शोभित जैन दमोह

आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित एक अनोखी कृति 'सदाचार सूक्ति काव्य' देखने का सौभाग्य मिला, जिस काव्य में अन्य काव्यों की लीक से हटकर कई विशेषताएँ नजर आईं।

प्रथम तो सदाचार शब्द ही 'सद्–आचार' अर्थात् 'समीचीन–आचरण' का द्योतक सिद्ध होता है, जो आचरण लोकमान्य होते हुए जीवों को सन्मार्ग पर चलाते हुए, सर्वसुखी बनाते हुए अपने अंतिम–लक्ष्य मोक्ष तक पहुँचा देता है।

दूसरी बात सूक्ति पर नजर डालते हैं तो जो बातें मानव को अपने जीवन में बड़ी उपयोगी होती हैं, उन्हें ज्ञानी लोग सूक्ति रूप में लिख दिया करते हैं और जो सूक्तियाँ जगत् में गद्य या पद्य रूप में बड़े चाव से पढ़ी जाती हैं।

तीसरी बात आचार्य भगवन् की काव्य प्रतिभा ने लोकोक्ति और मुहावरों के बड़े गूढ़ विषयों को भी अल्प शब्दों में काव्य से बांध दिया है, जो माला में मोती की तरह सुशोभित होकर अपने सदाचार की सुगन्धि फैला रहे हैं।

चौथी बात, इस 'सदाचार सूक्ति काव्य' में मात्र धार्मिक ही नहीं बल्कि लोकाचार में अत्यन्त संबंधित आवश्यक ज्ञान, विज्ञान, स्वास्थ्य, सामाजिक, प्रकृति और ध्यान–योग आदि सूत्रों को काव्यों में संयोजित कर

दिया है जो लोक के हर व्यक्ति के काम की चीज बन पड़ी है। यहाँ तक कि विद्यालयों और महाविद्यालयों में भी पाठ्यक्रम में समाहित करने योग्य, एक अनूठा काव्य हम सबके महापुण्य से रचित किया गया है। आचार्यश्री आर्जवसागर कवि भगवन् द्वारा रचे गये इस काव्य के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं जैसे.....

आद्य मंगल दृश्य अध्याय में–

प्रभुशरण में शान्ति मिलती है:–

समवशरण में, शरण सभी को।
वाणी मिले व, शांति सभी को ॥

ज्ञानी की वाणी से सबक :–

जियो और जीने दो सबको।
दया सबक मिलता है हमको॥

धर्म अध्यात्म दृश्य अध्याय में–

अहिंसा का परम स्थान बतलाते हुए कहा है कि:–

अहिंसा परमो धर्म कहें सब।
अभय दया कर, मान हरें सब॥

अतिथि को परिभाषित करते हुए कहा है कि :–

तिथि न निश्चित, अतिथि हैं।
अतिथि पुजते, शुभ–तिथि हैं॥

सद्गुरु दृश्य अध्याय में–

गुरु–विनय पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि :–

गुरु–विनय यह, हिय में धार।
विद्या आवे, सौख्य अपार॥

गुरु-उपदेश, मान आदेश।
जिससे मिटते सारे क्लेश॥

शिक्षा दृश्य अध्याय में लिखते हैं कि-

शिक्षा से देश-सेवा किस तरह होती है:-

शिक्षा उत्तम, ज्ञान-अपार।
स्वदेश सेवा, जीवन-सार॥

न्याय-नीति व्यवहार पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि :-

न्याय-नीति का हो व्यापार।
विश्वास बढ़ेगा अपरम्पार॥

अनुमति पूर्वक कार्य पर जोर देते हुए लिखा है कि :-

जितनी अनुमति उतना कार्य।
अधिक न कर, न दुःख दें आर्य॥

शिष्य-शीशी की डांट के महत्व को दर्शाते हुए कहते हैं :-

शीशी, शिष्य में लगती डांट।
दवा न बगरे, पकड़े वाट॥

गुरु-आज्ञा का फल बतलाते हुए कहा है कि :-

गुरु-आज्ञा से प्रतिभा चमके।
गुरु-गुण गाकर जीवन महके॥

प्रकृति दृश्य अध्याय में कहा है कि-

प्रकृति किस तरह गुणी बनने की शिक्षा देती है :-

गुण की सदा ही कीमत हो।
भले ही जन वे सीमित हों॥

समुद्र-बड़ा, खारा होता।
लघु कुआँ, मीठा होता॥

सुथरा स्वच्छ स्थल होता।
मन, पवित्र-निर्मल होता॥
नहीं वृक्ष बदला लेता।
पत्थर मारे फल देता॥
बाँस-बाँसुरी बन जाता।
गुरु-गुण शिष्य भी बन भाता॥

आहारौषधि दृश्य अध्याय में कहते हैं कि-

भोजन और औषध किस तरह गुणकारी है :-

शाकाहारी, शुद्ध-विचार।
जीते जग में, देव-प्रकार ॥
दिन में खाते, भजते नाथ।
रहें निरोगी, सबके साथ ॥
फल धान्य दें शक्ति महान।
धार्मिक होते हैं परिणाम ॥
प्रातः करते योग सभी।
उन्हें न आता रोग कभी ॥
भूख से ज्यादा, कभी न खाना।
बिना परिश्रम, न सो जाना ॥

राज्यादर्श दृश्य अध्याय में-

देश-प्रेम का वर्णन करते हुए कहते हैं :-

देशी-वस्तु में आदर हो।
मन संतोषी सागर हो ॥
चिंता छोड़ें, तन, परिजन।
सच्चे सैनिक, रक्षक-जन ॥

जहाँ स्वार्थी, आदमी देश हो।
पिछड़े संस्कृति, दूषित वेश हो ॥
सुखी रहें सब, शान्त हो प्रजा।
न अन्याय, न मिले सजा ॥
अपराधों का, नाम नहीं हो।
धर्म सौख्य-मय, ही जीवन हो ॥

चारित्र दृश्य अध्याय में-

दान पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं :-

चार दान देते श्रीमान।
धन्य उदारता कही महान ॥

बिना बैरभाव, सेवा करने पर जोर देते हुए कहते हैं :-

नहीं किसी से, घृणा करना।
वैद्य-समा हो, सेवा करना ॥
सदा दोष उपचार हि करना।
मार्ग-गिरे को राह पकड़ना ॥

निमित्त - उपादान के बारे में कहते हैं कि :-

साध्य उसे ही मिल पाता वह।
उपादान सह, निमित्त हो जह ॥

तप साधना दृश्य अध्याय में,

उदाहरण से मुक्ति की साधना बतलाते हुए कहते हैं :-

दुग्ध से घृत पा, युक्ति रूप से।
तन से निज पा, मुक्ति रूप से ॥

घृत वह पुनः न, दुग्ध में आता।
शिव-पद फिर, भव न पाता ॥

ध्यान दृश्य अध्याय में-

ध्यानी की विशेषताएँ बतलाते हुए, भव-पार होकर उत्तम-सुख कैसे पाएँ, इस बारे में कहते हैं :-

अशुभ व शुभ मन है संसार।
शुद्ध-मनस् से भव-उद्धार ॥
भोग त्यागता, योगी कहाय।
योगी वह ध्यानी कहलाए ॥
नाशाग्र हि दृष्टि, योगी रखता।
ध्यान लीन हो, निजसुख चखता ॥
देह जुदी है, आत्म जुदा है।
नीर दूध-सम, मोह मुदा है ॥

सल्लेखना भाव दृश्य अध्याय में-

उत्तम-मरण का वर्णन करते हुए कहते हैं :-

स्याही-लेखन, करे कलम यह।
कृश-कषाय तन, अंत धरम वह ॥
हल्का होता जहाँ शरीर।
वीर-मरण को पाये धीर ॥
परमेष्ठी का ध्यान रहा जहँ।
अंतिम-पड़ाव पूर्ण कहा वह ॥

सिद्ध–ज्योति जहँ जले सदा ही।
अखण्ड–ज्योति न बुझे कदा भी ॥

अंत्य–मंगल अध्याय में कहते हैं–

गुरुवर ने किस प्रकार काव्य रचना कर खुशी प्रदान की :–

सदाचार–सूक्ति–काव्य रचाया।
नीतिज्ञों का मन हर्षाया ॥

ऐसे अतिशय गुणकारी सौन्दर्य प्रधान काव्य को प्रत्येक क्षेत्र में पठनीय जानकर, अगर पुनः पुनः पठन में लाया जावेगा, तो यह निश्चित है कि लोक का मानव उन्नति के शिखर पर पहुँच जावेगा।

विश्वमारी कोरोना के प्रकोप में इस वर्ष सन् 2020 के मार्च माह से लॉकडाउन काल में गुरुवर आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज का संघ तालवेहट, (जिला–ललितपुर, उ.प्र.) में ग्रीष्मकालीन वास्तव्य रहा। उस काल में प्रातः मध्याह्न संघस्थ स्वाध्याय के अलावा एक–डेढ़ घण्टे के काल में गुरुवर ने सर्वप्रथम आध्यात्मिक कविताओं को लिखना प्रारंभ किया और बीच में ही भक्तों की भावनाओं को देखकर इन मार्मिक सूक्तियों के रूप में 'सदाचार सूक्ति काव्य' निर्मित हो गया। इस बीच नोएडा से दमोह जाते वक्त मुझे, भाई–भाभी के साथ आचार्यश्री ससंघ दर्शन का लाभ मिला।

विहार के दौरान भी प्राकृतिक छटा को निहारते हुए काव्य

की कविताएँ बनती रहीं और गुरुवर संघ को सुनाते रहे। अंततः यह काव्य सेरोन जी क्षेत्र पर सम्पूर्ण हुआ।

जब हम पुनः भैया-भाभी, बहिन के साथ सेरोन जी क्षेत्र पर पहुँचे और कुछ दिन विहार में सेवा-वैयावृत्ति का सौभाग्य प्राप्त हुआ, तब प्राणपुरा आदि में गुरु-मुख से इस नवीन-काव्य को सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सबसे पहले मेरी बहिन ऋषिका के लिए लेपटॉप पर टाइप कर प्रेस कॉपी तैयार करने का मौका प्राप्त हुआ।

इस अल्प समयावधि में ग्यारह अध्यायों एवं 631 पद्यों में काव्य का रचा जाना, गुरुवर को सरल-सा प्रतीत हुआ जबकि वे इसके कई वर्षों पूर्व तीर्थोदय-काव्य (सप्तसती), धर्मभावना शतक और सम्यक्ध्यान शतक आदि अनेक काव्य व कविताएँ छन्द रूप में रच चुके थे। अतः उनके द्वारा इस काव्य की रचना सहज ही हो गई। उनके द्वारा तेरह प्रदेशों में हुए विहार व वास्तव्य के अनुभव 'सदाचार सूक्ति काव्य' के रूप में सामने आये। यह हम सबका परम सौभाग्य है। गुरुवर के इस उपकार को हम जन्म-जन्मान्तर तक नहीं भूल सकते। इतदर्थ हम उनके चरणों में भक्ति पूर्वक उनकी दीर्घायु की मंगल कामना करते हुए कोटिशः नमन वंदन कर 'वंदे तद् गुण लब्धये' की भावना के साथ लेखनी को विराम देते हैं।

कार्तिक कृ. त्रयोदशी 13-11-2020

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृष्ठ क्र.
1.	आद्य मंगल दृश्य	2
2.	धर्म–अध्यात्म दृश्य	6
3.	सद्गुरु–दृश्य	18
4.	शिक्षा–दृश्य	24
5.	प्रकृति–दृश्य	40
6.	आहारौषध–दृश्य	50
7.	राज्यादर्श–दृश्य	62
8.	चारित्र–दृश्य	66
9.	तप–साधना दृश्य	84
10.	ध्यान–दृश्य	88
11.	सल्लेखना–भाव दृश्य	94
12.	अंत्य–मंगल(प्रशस्ति)	98
13	कविताएँ	102

सदाचार सूक्ति काव्य

आद्य-मंगल-दृश्य

- वीतराग वंदन
- मंगल का प्रयोजन
- प्रभु हैं नाव
- तीर्थंकर की शरण
- जिओ और जीने दो का उपदेश
- जिनेन्द्र दर्श के लाभ
- जिनवाणी है कल्याणी
- निर्ग्रन्थ-पद रज से बने काम
- मंगल-द्रव्योपकरण

आद्य मंगल दृश्य

वीतराग–' जिनवर ' वंदन।
सदाचार का अभिनन्दन ॥ 1 ॥

मंगल में, मम पाप – गलन।
कर देता सुखमय जीवन ॥ 2 ॥

नाव बीच में छूटे, हार।
प्रभु छोड़ना न, मझधार ॥ 3 ॥

प्रभु– भक्ति भी खूब करें।
प्रभुवर–सम फिर रूप धरें ॥ 4 ॥

वीतराग का, हो शुभ–ध्यान।
सरागी न भज, दुर्गति–खान ॥ 5 ॥

समवशरण में, शरण सभी को।
वाणी मिले व, शांति सभी को ॥ 6 ॥

तीर्थंकर शुभ– शरण में प्राणी।
शेर, गाय मिल –पीते पानी ॥ 7 ॥

जिओ और, जीने दो सबको।
दया-सबक, मिलता है हमको ॥ 8 ॥

जिन-मूरत से, कर्म पलाय।
सम्यग्दर्शन, निज में आय ॥ 9 ॥

जिनेन्द्र-दर्श से, निधत्ति निकाचित।
शीघ्र विधि क्षय, हो चिर से संचित ॥ 10 ॥

छत्रत्रय से, प्रभु त्रय लोक-,
बने पूज्य हैं, मिटता शोक ॥ 11 ॥

शिखर दिखे, तो करो प्रणाम।
आलय बैठे, जिनभगवान ॥ 12 ॥

जिनवर-वाणी, जन-कल्याणी।
अतिशय सुख पाते हैं प्राणी ॥ 13 ॥

निर्ग्रन्थ-दर्श, पद- रज से काम-
- बनते, पाते भवि शिवधाम ॥ 14 ॥

माला प्रभु की, निश दिन जाप।
निज में लाती, अपने आप ॥ 15 ॥

स्वस्तिक शुभमय सूचक जान।
चतुर् गति सु- निवारक मान ॥ 16 ॥

पूर्ण कलश- सम पाओ ज्ञान।
मंगल होता, सुख की खान ॥ 17 ॥

श्रीफल, शिवफल दर्शाता।
धवल तैल- सम महकाता ॥ 18 ॥

दीप, तिमिर का नाशक है।
निज में ज्ञान- प्रकाशक है ॥ 19 ॥

ध्वज केशरिया, शुभ पहचान।
प्रभावना का, करे बखान ॥ 20 ॥

सदाचार सूक्ति काव्य

धर्म-अध्यात्म-दृश्य

- नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव निक्षेप
- दान में पुण्य अपार
- चार पुरुषार्थ
- गुण-गुनता श्रोता
- अहिंसा परमो धर्म
- अतिथि
- पुण्य से सुख
- अनेकांत की दृष्टि
- स्वयं ही सुख दुःख का भोगी
- तीर्थंकर से तीर्थ चले
- ऋषभदेव-विद्या
- संवेग-वैराग्य
- निज पर वस्तु
- निश्चय-व्यवहार-दृष्टि
- भोग कैसे हैं
- सच्चे आभूषण
- सप्त-तत्त्व
- दस-करण

धर्म-अध्यात्म दृश्य

नाम, स्थापना, द्रव्य भाव से।
सदाचार निक्षेप, स्वभाव से ॥ 1 ॥

चार तरह का सदा विचारो।
भाव सहित जो हिय में धारो ॥ 2 ॥

सदाचार यह नाम रखें जब।
गुण बिन नाम, निक्षेप कहें तब ॥ 3 ॥

गुण आरोपित सदाचार जो।
वस्तु स्थापित सदाचार हो ॥ 4 ॥

था आचार या आगे मानो।
सदाचार वह द्रव्य है जानो ॥ 5 ॥

जहाँ पल रहा सदाचार है।
भाव-निक्षेप वह सदाचार है ॥ 6 ॥

यहाँ भाव से रहा प्रयोजन।
सदाचार को धारो भविजन ॥ 7 ॥

दान व पूजा, पुण्य अपार।
शील, निर्जला तारणहार ॥ 8 ॥

व्यसन छोड़–नर हो अविकार।
मानव जीवन, हो साकार ॥ 9 ॥

अर्थ, काम में भव–सुख सार।
धर्म, मोक्ष से, शिव–सुख धार ॥ 10 ॥

ध्यान विवेक सह, जो सुनता है।
श्रोता वह भवि, गुण गुनता है ॥ 11 ॥

जिनवर पूजा, भक्ति, सुदान।
स्वर्ग, मोक्ष सुख, देय महान ॥ 12 ॥

धर्म कार्य सह, भव सुख ध्यान।
भव–भव भटकन, कहा निदान ॥ 13 ॥

अहिंसा परमो धर्म कहें सब।
अभय, दया कर, मान हरें सब ॥ 14 ॥

तिथि न निश्चित, अतिथि हैं।
अतिथि पुजते, शुभ तिथि है ॥ 15 ॥

न तिर्यंच रखें भजते हैं।
कुदर्श, पापों से बचते हैं॥ 16 ॥

नव ग्रह रत्न हों, काम नहीं।
पुण्य हो, दाना पान वहीं ॥ 17 ॥

जिन धर्मी हो, जैन कहाय।
अहिंसा, संयम, शिवपद भाय॥ 18 ॥

धनिक शुद्ध नित, द्रव्य चढ़ाते।
द्रव्य रहित जो, भाव से गाते ॥ 19 ॥

तन्दुल शोभता, प्रभु चरण वह।
अक्षय प्रतीक, शिव, न मरण जँह॥ 20 ॥

सप्त गुणों सह, नवधा भक्ति।
दान करो भवि, यथा हो शक्ति ॥ 21 ॥

धर्म न आता कभी वहाँ पर।
अधोपात्र, जल पाय कहाँ पर ॥ 22 ॥

कर्म–क्षयोपशम जब हो जाता।
नहीं रोक फिर कोई पाता ॥ 23 ॥

सोलहवानी स्वर्ण–समा वह।
आत्म–शुद्धि धर, तपो महामह ॥ 24 ॥

अनेकान्त की दृष्टि हि भाती।
ऊपर रेखा, बड़ी सुहाती ॥ 25 ॥

जैसा करता वैसा भरता।
राग–द्वेष फिर किससे करता ॥ 26 ॥

अपना सुख– दुःख, स्वयं भोगता।
रोग कहो व, हो निरोगता ॥ 27 ॥

बुला बुलाकर, कोई न आते।
पुण्य रहे तो, स्वयं ही आते ॥ 28 ॥

कोई भोग के, पीछे भागें।
भोग किसी के, पीछे भागें ॥ 29 ॥

नंगे पैर ही, साधु चलें हित।
जीव बचें, जिन–धर्म चले नित ॥ 30 ॥

स्वारथ का है, यह संसार।
जाये अकेला, मोह निवार ॥ 31 ॥

यथा चाक से, रथ चलता है।
तीर्थ; तीर्थंकर से चलता है ॥ 32 ॥

ऋषभ देव से, विद्या आयी।
लिपि, अंक शुभ, विद्या पायी ॥ 33 ॥

ब्राह्मी को, लिपि विद्या भायी।
सुन्दरी को, अंक विद्या सुहायी ॥ 34 ॥

तीर्थ–उदय से, तीर्थंकर हों।
भव्य जनों के, क्षेमंकर हों ॥ 35 ॥

दिव्य–ध्वनि वह, सागर–सम है।
द्वादशांग शुभ, नहरों–सम है ॥ 36 ॥

दिव्यध्वनि अनुभय–वच होवे।
भविजन को आज्ञावत् शोभे ॥ 37 ॥

वीतराग जप, णमोकार महा।
परम शांति व, पुण्य है वहाँ ॥ 38 ॥

दिखें द्रव्य जहँ, लोक सु जानो।
न हो द्रव्य जहँ, अलोक हि मानो ॥39॥

आपद् में सहयोगी बनना।
इह, पर भव का, सौख्य है वरना ॥40॥

धर्म विरोधी, नहीं बने हम।
अनेकांत के, पथिक रहें हम ॥41॥

पाप कर्म से, सदा हि डरते।
सुगति हेतु, संवेग वे धरते ॥42॥

अशुचि तन, ना राग करें जो।
जड़ तन से, वैराग्य वरें वो ॥43॥

निज में रमना समता है।
पर में पड़ना ममता है ॥44॥

जो दिखता है वो पर है।
जो अपना है, अंदर है ॥45॥

पर को न अपना मानो।
राग द्वेष हों पहचानो ॥46॥

जहाँ निश्चय वहाँ निवृत्ति है।
जहाँ व्यवहार वहाँ प्रवृत्ति है ॥ 47 ॥

गुप्तियाँ जहां, निश्चय तहँ आता।
क्रिया जहाँ, व्यवहार कहाता ॥ 48 ॥

समीचीन षट् कर्म जहाँ हैं।
समीचीन व्यवहार वहाँ है ॥ 49 ॥

आहार, भय, मैथुन व परिग्रह।
संज्ञा, इनका छोड़ो आग्रह ॥ 50 ॥

स्त्री, राज्य व चौर, आहार ये।
विकथा तजना, सदाचार ये ॥ 51 ॥

भुक्त भोग सब, व्याधि-समा हैं।
जूठन-सम ये, नये कहाँ हैं ॥ 52 ॥

कंठाभूषण, सत्य कहा है।
श्रोताभूषण, शास्त्र रहा है ॥ 53 ॥

धर्माभूषण जहाँ रहे हैं।
जड़ आभूषण, व्यर्थ कहे हैं ॥ 54 ॥

मौन साधना, शांति प्रदायी।
झगड़ा झंझट–हर, सुखदायी ॥ 55 ॥

सप्त–तत्त्व

ज्ञान, दर्श–मय, चेतन जानो।
जड़ स्वरूप वह, पुद्गल मानो ॥ 56 ॥

वृक्ष भूमि से तत्त्व जु लेता।
जीव; भाव से कर्म संजोता ॥ 57 ॥

नीर टिके न, ढलान पथ में।
कर्मबंधे न, ईर्यापथ में ॥ 58 ॥

गड्डे में जा, नीर ठहरता।
कषाय रहे तब, विधि से बँधता ॥ 59 ॥

तत्त्व; वृक्ष में बहु रंग पाते।
आत्म में कर्म, विविधता पाते ॥ 60 ॥

धूल चिपकती, यथा तैल से।
कर्म–बंध, राग–द्वेष मैल से ॥ 61 ॥

त्याग–भाव यह, कर्म रोकता।
जैसे ढक्कन, नीर रोकता ॥ 62 ॥

सूरज; जैसे नीर उड़ाये।
वैसे; तपसी कर्म झड़ाये ॥ 63 ॥

जड़ नशती तब, वृक्ष सूखता।
कर्म नाश हों, आत्म छूटता ॥ 64 ॥

अग्निशिखा, ऊपर जाती है।
कर्म–मुक्तात्मा, शिव पाती है ॥ 65 ॥

पुट्ठा पलटे, पन्ने पलटते।
पुण्य पलटता, दुःख वरषते ॥ 66 ॥

पुट्ठा ढकता, पन्ने थमते।
पाप पलटता, सौख्य वरषते ॥ 67 ॥

मयूर पंख से, स्वर्ण न निकले।
कदापि अभव्य को, मोक्ष न मिले ॥ 68 ॥

दस-करण

मोह, योग से, कर्म हैं आते।
प्रकृति आदि सह, वे बंध जाते ॥ 69 ॥

निज-परिणामों, से ही कर्म का।
हो स्थिति, रस, उत्कर्ष कर्म का ॥ 70 ॥

मूल भेद बिन, प्रकृति बदलती।
होय संक्रमण, अन्य में ढलती ॥ 71 ॥

कर्म-स्थिति का, कम हो जाना।
अपकर्षण, आगम में माना ॥ 72 ॥

समय पूर्व जब, कर्म फलित हों।
कर्म-उदीरणा, साथ गलित हों ॥ 73 ॥

उदय उदीरणा, ना हि निर्जरा।
सत्त्व कहो, कर्म, डिगे न जरा ॥ 74 ॥

कर्म स्व-स्व, स्थिति पाकर।
फलें व झड़ते, उदय में आकर ॥ 75 ॥

न हो शक्य, उदय में आना।
कर्म–उपशम है, 'जिन' नें जाना॥ 76 ॥

नहीं कर्म; संक्रमित होते जो।
निधत्ति रूप, कहलाते वो ॥ 77 ॥

निकाचित कर्म में, संक्रमण भी न।
उत्कर्षण, अपकर्षण भी न ॥ 78 ॥

दूध दही हो, थोड़े दही से।
अनेक बदलते, इक धर्मी से॥ 79 ॥

योग में न विषय–भोग होता है।
योगी निज में, नित खोता है ॥ 80 ॥

उदधि बूँदों सम, देवायुष जानो।
उल्कापात–सम, नर–आयुष मानो ॥ 81 ॥

सूर्य–घाम से, सूखे पानी।
क्षण–क्षण आयुष, नशती प्राणी॥ 82 ॥

सदा न आदर, भव में साथ।
अल्प चाँदनी, फिर हो रात ॥ 83 ॥

सदाचार सूक्ति काव्य

सद्गुरु–दृश्य

- गुरु–विनय
- गुरु–उपदेश
- गुरु प्रति ईर्ष्या
- गुरु–भक्ति
- गुरु–चर्या
- गुरु का सच्चा स्वरूप
- गुरु–आज्ञा
- गुरु–उपकरण
- गुरु–कृपा का फल
- गुरु–आशीष का फल
- गुरु–सेवा में पुण्य
- गुरु–उपकार

सद्गुरु-दृश्य

गुरु-विनय यह, हिय में धार।
विद्या आवे, सौख्य अपार ॥ 1 ॥

गुरु-आदर, सम्मान के साथ।
दुःख आवें न, सब जन साथ ॥ 2 ॥

गुरु-उपदेश, मान आदेश।
जिससे मिटते, सारे क्लेश ॥ 3 ॥

गुरु से करे ईर्ष्या जो।
न गुण गायें, भटके वो ॥ 4 ॥

विषयों में रत, रागी जानो।
ज्ञान, ध्यान रत, साधु मानो ॥ 5 ॥

गुरु में भक्ति, मेहनत श्रुत में।
प्रतिभा चमके जिनवर मत में ॥ 6 ॥

एक ही चर्या, दिन श्रावक-गृह।
लौकिक-कार्य न जावें मुनि, गृह ॥ 7 ॥

एक ही काल में, जल–भोजन।
गृहि गृह में लें, मुनि–जीवन ॥ 8 ॥

योग्य–वस्तु, संतोषी मन।
नहीं याचना, मुनि–जीवन ॥ 9 ॥

अकेली महिला, कहीं की कौन ?
न निरखें मुनि, रहते मौन ॥ 10 ॥

रजनी; जीवों की जननी।
रुकें व, धारें मौन मुनी ॥ 11 ॥

तीर्थंकर–सम, रूप धरें।
स्व–पर आत्म–कल्याण करें ॥ 12 ॥

नीचे लख, मुनि राह चलें।
लौकिक वस्तु, काम न लें ॥ 13 ॥

व्यर्थ ग्रन्थ, न साथ रखें।
ध्यानी मुनि, जिननाथ लखें ॥ 14 ॥

गुरु–आज्ञा ही अमृत होय।
गुरु–वच में मुनि जागृत सोह ॥ 15 ॥

गुरु–आसन पर नहीं बैठना।
दे सम्मान, गुरु–पाद बैठना ॥ 16 ॥

आसन शयन, गुरु के नीचे।
पालें विनय नित, चालें पीछे ॥ 17 ॥

नग्न–मुमुक्षु, संग न मण्डल।
मयूर पिच्छीका, धार कमण्डल ॥ 18 ॥

शिला है शय्या, दिक् ही अम्बर।
हाथ है तकिया, पूज्य दिगम्बर ॥ 19 ॥

पाप–वचन में मौन मुनी हैं।
ज्ञान, ध्यान, तप धार गुणी हैं ॥ 20 ॥

मलयागिरि का, चन्दन घिसता।
तपकर मुनि का, आत्म निखरता ॥ 21 ॥

सिद्ध–शिला पर, प्रभू–वास्ता।
मोक्ष–मार्ग है, गुरु–रास्ता ॥ 22 ॥

देव करें, प्रभु–सेवा याद।
गुरु दें सबको आशीर्वाद ॥ 23 ॥

नर, सुर पञ्च–गुरु सेवा करते।
धन्य कहें गुरु–आशी वरते ॥ 24 ॥

भक्त लोग यह करें याचना।
गुरु; आगम की करें वाचना ॥ 25 ॥

सदा ही भव्यों की यह आशा।
नगर मम, गुरु का, हो चौमासा ॥ 26 ॥

शक्ति, भक्ति जिन–भक्त गणों में।
रहें प्रशंसित साधु जनों में ॥ 27 ॥

गुरु–वचन, शुभ उपकारक हैं।
कहे उपकरण, शिवकारक हैं ॥ 28 ॥

गुरु आशीष में, शक्ति बड़ी है।
श्रद्धा मात्र, सुविधाएं खड़ी हैं ॥ 29 ॥

गुरु–सेवा में, अमित–पुण्य है।
हो प्रभावना भी अक्षुण्य है ॥ 30 ॥

गुरु; कुम्भकार–सम हैं होते।
शिष्य– मृत्तिका को गढ़ देते ॥ 31 ॥

मोक्ष–पथ गुरु से, शुरू होता है।
बिन गुरु जीवन, शून्य होता है ॥ 32 ॥

घट में उष्ण जल, शीतल होता।
स्वभाव आता, विभाव खोता ॥ 33 ॥

घट–सम शोभा, मुनि हैं पाते।
विभावी–आत्म को, स्वभाव लाते ॥ 34 ॥

सदाचार सूक्ति काव्य

शिक्षा- दृश्य

- तीन मकार
- शिक्षा में ज्ञान अपार
- पुरुषार्थ व न्याय
- आलस त्याग
- धार्मिक नारी
- विश्वास
- कब, कितना बोलें
- अनावश्यक हास्य व क्रोध वर्जनीय
- गुणवानों से लाभ
- लालच व्यर्थ
- व्यर्थ न करें
- वाणी का अनुपात
- कुल-नारी
- निस्वार्थ सेवा-फल
- अनुमति रूप कार्य
- शिक्षा लें
- एकता के लाभ
- दांत और जीभ की शिक्षा
- अच्छा बुरा क्या
- पिता पुत्र
- स्त्री-मर्यादा
- शीशी, शिष्य
- पतिव्रता व स्वदार संतोष
- अवगुण ग्रहण नहीं
- अज्ञ, बाल सह न रमें
- चेतना के स्वामी
- गाँव का जोगी
- लक्ष्य दमकता

शिक्षा- दृश्य

मद्य, मांस, मधु, तीन मकार।
छोड़ें, आते सौम्य विचार ॥1॥

वाणी, माला, मंच प्रकार।
नाम चाह हो, सब निस्सार ॥2॥

शिक्षा उत्तम, ज्ञान अपार।
स्व–देश सेवा, जीवन सार ॥3॥

रात विश्रांति, दिन पुरुषार्थ।
लक्ष्मी आवे न्याय के साथ ॥4॥

निशि–दिन चिंता, लोक विचार।
आर्त्त, रौद्र से, भव निस्सार ॥5॥

धर्म सुरक्षा, आलस त्याग।
कर्त्तव्यों में निशि–दिन जाग ॥6॥

धार्मिक नारी सौम्याचार।
स्वर्ग बनाती गृह को नार ॥7॥

न्याय–नीति का हो व्यापार।
विश्वास बढ़ेगा अपरम्पार ॥8॥

लेन–देन इन्साफ करें।
जन–रक्षा कर प्रेम वरें ॥9॥

धर्म–सभा में सजग रहें।
ज्ञानामृत रस–पान करें ॥10॥

न बोलें, बिन काम कभी।
न झंझट, हों मित्र सभी ॥11॥

नहीं बात, बिन सोचे हो।
जानें, सज्जन पहुँचे हों ॥12॥

बहुत बोलना मूल्य नहीं।
तोलें, बोलें मूल्य वहीं ॥13॥

बिन कारण न हँसते जो।
मर्यादा–गुण गहते वो ॥14॥

नहीं क्रोध, क्षण में आता।
ज्ञानीपन सबको भाता ॥15॥

सदा सादगी अपनाते।
सन्मार्गी शान्ति पाते ॥ 16 ॥

गुणवानों की गुण की चाह।
पकड़ा देती उत्तम राह ॥ 17 ॥

पर गृह जा न लालच हो।
ना माँगें यह आदत हो ॥ 18 ॥

चलते निरखें राह सही।
जीव बचें यह दया कही ॥ 19 ॥

पढ़ें लिखें नित नेक बनें।
समय व्यर्थ न कभी करें ॥ 20 ॥

जल विद्युत न व्यर्थ करें।
बचाने इन्हें समर्थ रहें ॥ 21 ॥

मौन धारकर भोज करें।
शुद्ध स्वाद व शान्ति वरें ॥ 22 ॥

कम बोलें, सुनना ज्यादा।
यही बड़ों की मर्यादा ॥ 23 ॥

समता रखना सुख दुःख में।
मीठी–वाणी हो मुख में ॥ 24 ॥

ज्यादा चिंता, व्याधि धाम।
निज चिंतन से पा विश्राम ॥ 25 ॥

बहुत दोष जहँ, शिथिलाचार।
दूर, बचाना निज–आचार ॥ 26 ॥

न लालच जो करते जान।
स्व–संतोषी, स्वाभिमान ॥ 27 ॥

पर गृह नाच न करती जान।
कुल–नारी की यह पहचान ॥ 28 ॥

नहीं सजाओ अपना रूप।
ना पाओगे वनिता रूप ॥ 29 ॥

निःस्वार्थी बन सेवा हो।
पुण्य की मिलती मेवा हो ॥ 30 ॥

जितनी अनुमति उतना कार्य।
अधिक न कर, न दुःख दें आर्य ॥ 31 ॥

धर्म–कर्म को करते आर्य।
पाप करे वह बने अनार्य ॥32॥

मीठा होता मोदक भाय।
सफल काम, तब खुशियाँ लाय ॥33॥

घंटा टन–टन बजता है।
मन में खुशियाँ भरता है ॥34॥

मानस्तंभ, मान हरता।
भक्ति से तन्मय है करता ॥35॥

लघु द्वार से शिर नमता।
सदा सिखाता निर्मदता ॥36॥

कीर्ति–स्तम्भ कीर्ति गाय।
गुण भायें शुभ, मन हर्षाय ॥37॥

सूर्योदय कर्त्तव्य सिखाय।
छोड़ो आलस, धर्म बताय ॥38॥

दिन में सोना अंध समान।
ज्ञानावरणीय बंध प्रधान ॥39॥

सदा एकता शक्ति भरती।
रस्से सम मजबूती करती ॥40॥

धागा टूटे, हो बेकार।
नहीं एकता, होती हार ॥41॥

सींग लगें न, दूर ही चलना।
छोड़ विरोधी, हमको ढलना ॥42॥

लक्षण पूत पालने होता।
सुपुत्र, न श्रम ढालने होता ॥43॥

मात्र नसैनी, रहो नहीं तुम।
चढ़ो, पाओ लक्ष्य सही तुम ॥44॥

खर्चा कम, आमद ज्यादा हो।
यथा कमण्डलु, मर्यादा हो ॥45॥

दांत ये कठोर, जल्दी जाते।
मृदु जीभ जो, स्वाद हैं पाते ॥46॥

दांत मुड़े ना, रहें कठोर।
जीभ ही रहती, अंतिम छोर ॥ 47 ॥

सूर्य बुरा न, अच्छा होता।
सोच; राग द्वेष मय है होता ॥ 48 ॥

जैसा चश्मा, वैसाहि रंग।
मूर्ख से कल्पित, सभी विरंग ॥ 49 ॥

अच्छा सोचें, अच्छा रंग।
बुरा सोचते, बुरा हो ढंग ॥ 50 ॥

जिससे निज का, पतन है होता।
वह अच्छा पर, बुरा ही होता ॥ 51 ॥

यथा हो मंदिर, समाज ही वैसा।
चाल-चलन, आचरण हो जैसा ॥ 52 ॥

पिता आचरण, पुत्र हो वैसा।
शिष्य देख लो, गुरु हो जैसा ॥ 53 ॥

अन–आवश्यक विकास करते।
पाप बढ़ाते, ह्रास वे करते ॥54॥

मनोरंजन में समय गमाते।
आयु अंत में, फिर पछताते ॥55॥

बने बेशरम, पीटे बालक।
करें इशारा–मीठे पालक ॥56॥

समझे सुबुद्धि, थोड़े बोल।
प्रतिभाशाली हो अनमोल ॥57॥

गृह शोभित, स्त्री रूप जो।
गृह–बाहर, मर्यादा रूप हो ॥58॥

कुलाचार अनुरूप सभी हों।
गुण मिलते, फिर रूप सही हो ॥59॥

नीव की जितनी गहराई हो।
इमारत उतनी ऊँचाई हो ॥60॥

पुस्तक अपने पास ही रखते।
गन्दी न हो, हाथ न रखते ॥61॥

सुता हो, दारा, निगरानी में।
पर घर, पड़ते हैरानी में ॥62॥

शीशी, शिष्य में लगती डांट।
दवा न बगरे, पकड़े वाट ॥63॥

जिओ और, जीने दो मंत्र।
जगत् सौख्य का, मानो यन्त्र ॥64॥

मिट्टी से बनते भगवान।
मरण होय, तन मिट्टी जान ॥65॥

पतिव्रता सौभाग्य–वती।
सुखी, स्वदार–संतोष पति ॥66॥

सुशील नारी, दो कुल शोभें।
हो बदनामी, द्वय कुल रोवें ॥67॥

छोड़ें गृह व कर्त्तव्य न भावे।
घर व घाट को तज पछतावे ॥68॥

काना टेंट न, निहारे अपना।
घूर फुली पर, लख यह रटना ॥69॥

बहुत दोष, न निज दिखते हैं।
लघुदोष भी, पर के लखते हैं ॥70॥

नहीं नाचते जिसको आवे।
आंगन टेड़ो बता छुपावे ॥71॥

नहीं काम करना जब आवे।
लाख बहाने, मुख से गावे ॥72॥

आज्ञा जिसको कभी न भावे।
घोड़े को वो पानी दिखावे ॥73॥

पाप–कर्म वश, भोग न मिलते।
ईर्ष्या भाव, दूजे में पलते ॥74॥

जिसे न मिलें मिष्ट अंगूर।
कहे लोमड़ी खट्टे अंगूर ॥75॥

ज्ञानी चलें अज्ञ रोकते।
हाथी चले श्वान भौंकते ॥76॥

न पर अवगुण झाँको तुम।
ढक्कन सम, भवि ढाको तुम ॥77॥

स्वयं दोषकर, पर शिर माढे।
स्व–बन्दूक, पर कंधे धारे ॥78॥

काम ले पर से, वस्तु बचाये।
अन्य तवे पर, रोट पकाये ॥79॥

घड़ियाँ टिक टिक करती हैं।
रुको ना–चलना कहतीं हैं ॥80॥

शक्ति मिली बस, उद्यम करना।
मुफ्त मिले, मत ऊधम करना ॥81॥

व्यर्थ फेंकते, भोजन, पानी।
न दाना, फिर, भटके मानी ॥82॥

सभ्य शरीफ, न व्यसन लुभाता।
अश्लीली से, दूर ही भाता ॥83॥

गिरी पड़ी हो, भूली वस्तु।
धूल– समा, पर न लें वस्तु ॥84॥

बड़ों को देख हि, गुणों को गहना।
निम्न देखकर, निम्न न बनना ॥85॥

अज्ञ, बाल– सह जो रमते हैं।
साधु हास्य के पात्र बनते हैं ॥86॥

अज्ञ जनों– सह मजा लीन हों।
गंभीर वृत्ति को– छोड़, हीन हों ॥87॥

बहुत परिग्रह, नाते रिस्ते।
मकड़ जाल सम, साधु न फँसते ॥88॥

पाचन कम जहँ, भोग अजीर्ण हो।
तृष्णा जवाँ पर, तन ही जीर्ण हो ॥89॥

थोड़ा पढ़ना, गुनना ज्यादा।
पाचन की है, यह मर्यादा ॥90॥

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील।
परिग्रह त्यागे, साधु सुशील ॥91॥

केवली सिद्ध, जहँ ज्ञान चेतना।
अन्य में होती, अज्ञान चेतना ॥92॥

स्थावर जहँ कर्म चेतना।
त्रसों में कर्म फल, रहे चेतना ॥93॥

कर्त्ता भोक्ता संसारी है।
कर्म व कर्मफल का धारी है ॥94॥

ज्ञान अधूरा, अधिक बताय।
अध जल गगरी, छलकत जाए ॥95॥

गाँव का जोगी, ख्यात विदेश में।
मरण भला वह, अन्य प्रदेश में ॥96॥

पुण्य योग का, बड़ा ही राज।
एक पंथ, दो बनते काज ॥97॥

सार रहित हो बात अगर।
वचन झुण्ड हो हास्य का घर ॥98॥

बूँद बूँद वच, मीठे अगर।
भरें सुहित, गागर में सागर ॥99॥

गुण बिन लोक में, मात्र कहावने।
दूर के ढोल, बड़े सुहावने ॥100॥

तनक कर मनक, देखते मौका।
तिल का ताड़ बनाते, धोका ॥101॥

मूढ़ झूठ कह, हँसी उड़ावें।
मजाक, धजी का साँप बनावें ॥ 102 ॥

स्वारथ करता जीवन खोटा।
वादा बदले, पैंदी बिन लोटा ॥ 103 ॥

कमाई करे न, व्यर्थ गमाई।
विमाई बिन, अजान पीर पराई ॥ 104 ॥

गुण चारित बिन, केवल ठाट।
याद न गुण, यह पाठ सपाट ॥ 105 ॥

एक आत्म सध, सब सध जाये।
इक स्वात्म तज, सब कुछ जाये ॥ 106 ॥

दान दे पुण्य, पाप कम धीरा।
ऊँट के मुँह में, पाप-सम जीरा ॥ 107 ॥

गुरु-आज्ञा से, प्रतिभा चमके।
गुरु-गुण गाकर, जीवन महके ॥ 108 ॥

बाह्य में सुख कहें, होती है हाँसी।
नीर में रहती मीन जहँ प्यासी ॥ 109 ॥

देख भाल कर चलना सन्देश।

मोक्षमार्ग यह जिनवर उपदेश ॥ 110 ॥

संत मिलन, संसार का अंत।

संतोषी बन, फिर हो संत ॥ 111 ॥

प्राची दिक् में, सूर्य उदय हो।

साधु दिन-भर चर्या में खो ॥ 112 ॥

ध्यानी जीवन, शोभे ऋषि का।

ऋषि संग जो, भव शोभे उसका ॥ 113 ॥

मुनि गृह पधारें, भाग्य चमकता।

सुयोग आशीष, लक्ष्य दमकता ॥ 114 ॥

आचरण बिन निरर्थक ज्ञान।

ऊँची दुकान, फीका पकवान ॥ 115 ॥

सदाचार सूक्ति काव्य

प्रकृति दृश्य

- गुणों की कीमत
- मीठा-कुआँ
- नम्र-वृत्ति
- वृक्ष की शिक्षा
- बहता-पानी
- साधु-निर्मल
- मातृ-कारुण्य
- बालक, पालक
- स्वाश्रित-जीवन
- बांस से बाँसुरी-सम शिक्षा
- धर्म की कील
- जंगल में मंगल
- कोयल, कौआ-स्वभाव
- ताल का ओना
- श्रीफल-शिक्षा
- दिया तले अँधेरा
- पिच्छिका कार्य
- मयूर शब्द की शक्ति
- योग्य-पुरुष

प्रकृति दृश्य

गुण की सदा हि कीमत हो।
भले ही जन वे सीमित हों ॥1॥

समुद्र, बड़ा, खारा होता।
लघु कुआँ, मीठा होता ॥2॥

नम्र-वृत्ति जो रखते हैं।
लदे वृक्ष-सम रहते हैं ॥3॥

सुथरा, स्वच्छ स्थल होता।
मन, पवित्र निर्मल होता ॥4॥

नहीं वृक्ष बदला लेता।
पत्थर मारे फल देता ॥5॥

एक जगह, न राग करें।
ज्ञानी सदा विहार करें ॥6॥

पानी बहता, शुद्ध रहे।
बने कीच, जो नहीं बहे ॥7॥

प्रकृति बदलती, प्रीति न हो।
अधिक मोह न, रीति गहो ॥8॥

स्वल्प अधिक लो, निशदिन जल।
कूप-समा, साधु निर्मल ॥9॥

लहराता, निज खेत है भाता।
वैसा मैत्री पन है सुहाता ॥10॥

मेघ देखता, हर्षित मन हो।
कृषक-समा, प्रमुदित जीवन हो ॥11॥

गोद रखे बालक-सम मन में।
धारो मातृ कारुण्य स्व-जन में ॥12॥

यथा दर्पण में रूप झलकता।
बने केवली, विश्व झलकता ॥13॥

नशे खिलौना, रोवे बालक।
मुनि समभावी, जैसे पालक ॥14॥

पत्थर कटता, मूरत मिलती।
कर्म नशे शुद्धात्म प्रकटती ॥15॥

ऊँचा तरु हो, छाँव नहीं जब।
सुगुण नहीं तो, काम नहीं तब ॥16॥

प्रकृति, सत्त्व में, क्षमा-भाव हो।
अतिआवश्यक, गह-स्वभाव हो ॥17॥

यन्त्र पराश्रित, बंधन है।
स्वाश्रित तन मन, जीवन है ॥18॥

स्वाश्रित काज, सदा शोभे।
स्वाभिमान-विजय होवे ॥19॥

यथा जुगाली करती गाय।
तथाहि मुनि करते स्वाध्याय ॥20॥

खाली घर, भूतों का डेरा।
खाली मन, शैतान लुटेरा ॥21॥

बाँस; बाँसुरी बन जाता।
गुरु-गुण शिष्य भी बन भाता ॥22॥

चक्की-दाना पिस जाता।
कील मिले, रक्षा पाता ॥23॥

भव–चक्की में, दुःखी सजीव।
धर्म–कील हो, सुखी हों जीव ॥ 24 ॥

भरे बादल जल वर्षावें।
नेक कवि सु–कविता गावें ॥ 25 ॥

मिले खिलौना, रमता बाल।
तत्त्व रमें मुनि, मनस् सम्हाल ॥ 26 ॥

रक्षा करती जैसे ढाल।
यति रक्षित हो, गुप्ति सम्हाल ॥ 27 ॥

भोला–भाला, उदासीन हो।
न यति कदापि, भोग–लीन हो ॥ 28 ॥

ताना, बाना से, पट बनता।
चेतन, तन से, जीवन चलता ॥ 29 ॥

गृहि–गृह, मम न साधु कहे।
दीमक–वामी, सर्प रहे ॥ 30 ॥

सर्प रहे, दीमक–वामी में।
न कहे मुनि, गृह–स्वामी मैं ॥ 31 ॥

नीम, कंजीर, विष, हलाहल।
पाप-कर्म का ईदृश फल ॥32॥

गुड़, खांड, शक्कर, अमृत।
फले पुण्य, रहना जागृत ॥33॥

पद्म कमल का देखा वन।
कोमल-मय हो सबका मन ॥34॥

जंगल में शुभ शांति मिले।
तन, मन में विश्रांति मिले ॥35॥

हरयाली लख प्रमुदित मन।
प्रकृति प्रदत्त ऐसा जीवन ॥36॥

जंगल में होता मंगल।
जिनवर हों, फिर न अमंगल ॥37॥

पुष्प; सुगन्धि फैलाते।
गुणी सुगुण को महकाते ॥38॥

मेघ-देखता, नाचे मोर।
परमेष्ठी लख, भाव-विभोर ॥39॥

कोयल, कौआ बड़ा ही भेद।
भक्ति में सुख, निंदा में खेद ॥40॥

चंदा–देख चकोर रुझावे।
भगवन् लखे, भक्त रस पावे ॥41॥

अधिक संग, न ढोना सुनो।
यथाताल में, ओना गुनो ॥42॥

पर को तज, नित निज को भजना।
आत्म गुणों से, सुंदर सजना ॥43॥

उपकार वह, सदुपकार ही देता।
यथा मिष्ट जल, श्रीफल देता ॥44॥

यथा श्रीफल में, चिन्ह त्रय होवें।
मोक्षमार्ग में रत्नत्रय शोभें ॥45॥

मुनि; संग तज, लोंच सुहाता।
छिलका, जटा बिन, श्रीफल भाता ॥46॥

बाह्य विरंग, अन्तस् शुभ होता।
यथा भीतरी, श्रीफल होता ॥47॥

आज्ञा कठोर, गुरु अंतर निर्मल।
यथा नारियल, अंदर कोमल ॥48॥

भेला, खोपड़ी में बजता है।
तन, आतम का भेद कहता है ॥49॥

श्रीफल फोड़ना, यथा कठिन है।
मोह छोड़ना, तथा कठिन है ॥50॥

बिन छिलके का, श्रीफल धवल है।
अरिहंत अवस्था, त्यों उज्ज्वल है ॥51॥

तैल–नारियल, शुद्ध है भाता।
कर्म बिना यह, आत्म सुहाता ॥52॥

गरी निकलती, व्यर्थ रहे जो।
कर्म कटें बस; सिद्ध कहे वो ॥53॥

सिद्ध–जीव ऊपर जाता है।
तैल, दुग्ध– ऊपर भाता है ॥54॥

सिद्ध बने फिर भव न होता।
तैल से फिर न, श्रीफल होता ॥55॥

श्री– लक्ष्मी–शिव, पाते भगवन्।
श्रीफल के सह, होती भावन ॥56॥

कलश पर श्रीफल उर्ध्व दिशा में।
मुक्त– आत्म गति, सिद्ध दशा में ॥57॥

ईंट– जबाब, पत्थर से देता।
पत्थर– जबाब, तरु फल से देता ॥58॥

प्रकृति सिखाती शिष्टाचार।
हर मानव का हो आचार ॥59॥

मृग निज नाभि– कस्तूरी हो।
निज में सुख लें, न दूरी हो ॥60॥

अठ पहरी घृत, स्वयं महकता।
गुणी आत्मा, गुण न कहता ॥61॥

ज्ञान बहुत पर, दोष पलें जँह।
रहे अंधेरा, दिया तले वह ॥62॥

संगति जैसी, वैसा जीवन।
सीप स्वाति में जल मोती बन ॥63॥

धर्म सदा ही होता उज्ज्वल।
गौ बहु रंगी, दुग्ध हो धवल ॥64॥

कोमल हल्की, पिच्छी कहाती।
सूक्ष्म जीव भी, सदा बचाती ॥65॥

मयूर शब्द से, सर्प भागते।
जिनेन्द्र भक्ति से, कर्म भागते ॥66॥

सूर्योदय से पूर्व उठे जो।
बुद्धि शक्ति, क्षीण नहीं हो ॥67॥

घर में कूप, प्रातः की धूप।
वायु पा नभ में, चमकता रूप ॥68॥

प्रकृति भोग्या, भोगी पुरुष।
परिमित भोगे, योग्य पुरुष ॥69॥

सदाचार सूक्ति काव्य

आहारौषध-दृश्य

- शाकाहार का प्रभाव
- दिन-भोजन से लाभ
- भोजन के बाद
- उबला-जल अमृत
- भोजन-ज्ञान
- मेहनत से लाभ
- मिट्टी-शीतल
- तीन वस्तुएं
- देश-वस्तुएं
- योगी और जैनी
- आहार है दवा
- हवा है दवा
- पथ्य-अपथ्य
- धान्य, फलों से लाभ
- संतुलित-आहार व इलाज

आहारौषध दृश्य

पथ्य–अपथ्य में, सुख व खेद हो।
हित व अहित का, आयु–वेद (ज्ञान) हो ॥ 1 ॥

आहार, निद्रा, ब्रह्मचर्य में।
सजग, स्वस्थ्य हों निजी–चर्य में ॥ 2 ॥

मन्द, मध्य व तीक्ष्ण–अग्नि में।
योग्य–पाच्य हो जठराग्नि में ॥ 3 ॥

भोजन हो तन–प्रकृति योग्य वह।
सात्विक–भोज्य ही योगि योग्य वह ॥ 4 ॥

वृद्ध, जवाँ व बाल अवस्था।
प्रकृति देख ही दवा व्यवस्था ॥ 5 ॥

शाकाहारी, शुद्ध–विचार।
जीते जग में, देव–प्रकार ॥ 6 ॥

दिन में खाते, भजते नाथ।
रहें निरोगी, सबके साथ ॥ 7 ॥

भोजन कर, झट न पढ़ना।
थोड़ा मन यह, खाली रखना ॥8॥

गर्म–जल हो, सुपाच्य रहा है।
उबले; अमृत– वाच्य सखा है ॥9॥

बिना न उबला, भोज्य कभी हो।
फिर बीमारी, कभी नहीं हो ॥10॥

निज–प्रकृति का विचार करते।
सीमित खा, बीमार न पड़ते ॥11॥

शाकाहारी भोजन होता।
शक्ति आये, भक्ति भी देता ॥12॥

नहीं रोज पकवान सेवते।
बीमारी न कभी देखते ॥13॥

कम खायें, संतोष रखें जो।
मेहनत कर, न रोष करें वो ॥14॥

मौसम जैसा, धान्य व फल हो।
सेवें; होवे भोज्य सफल हो ॥15॥

शोधे बिन न खायें सभी जन।
न पड़ते बीमार कभी जन ॥ 16 ॥

भोज्य–पथ्य में नहीं उलंघन।
बीमारी में, शोभे लंघन ॥ 17 ॥

बाजार निर्मित वस्तु जु खाते।
बीमारी हो, मृत हो जाते ॥ 18 ॥

शुद्ध–भोज्य, कुछ दूरी जन में।
व्यर्थ व्याधि न, हो जीवन में ॥ 19 ॥

मात्रा–भोजन, मेहनत साथ।
स्वस्थ रहोगे, दिन व रात ॥ 20 ॥

वात, पित्त, कफ कुपित हो हार।
विवेक संतुलन, स्वास्थ सुधार ॥ 21 ॥

फल धान्य दें शक्ति महान।
धार्मिक होते हैं परिणाम ॥ 22 ॥

चबा– चबा जो, अन्न हैं खाते।
कम खा, जीवन में मुस्कराते ॥ 23 ॥

प्रातः करते योग सभी।
उन्हें न आता रोग कभी ॥24॥

काली मिट्टी- लेप पथ्य है।
शीतलता का सुकून तथ्य है ॥25॥

त्रि-फल मिल कर त्रिफला होता।
रत्नत्रय; शिव- फल को जोता ॥26॥

त्रि-वस्तु-सह हलवा महके।
सुख होता, रत्नत्रय गहके ॥27॥

व्याधि हरे, अमृत-धारा।
सौख्य, जहाँ शिवपद धारा ॥28॥

अहिंसक आहार, शाकाहार।
देश की भाषा, सौम्य-विचार ॥29॥

एक आहार व, दोय विहार।
योगि; वासना देते मार ॥30॥

जल-गालन, दिन भोजन भाय।
व्यसन त्याग, वह जैनी कहाय ॥31॥

आम–पना वह, तप–लू हरता।
मुनि तप समता–सह है सहता ॥32॥

पड़े ठण्ड, गेंहू तब पकते।
परीषह सहें, कर्म हैं झड़ते ॥33॥

गरिष्ठ भोज्य व ज्यादा हो।
ब्रह्मचर्य में–बाधा हो ॥34॥

हवा; दवा का, काम करे।
तन में भी वह, शक्ति भरे ॥35॥

कम खा, अधिक चबाते जो।
अपच–बीमारी न पाते वो ॥36॥

पर्वणि, ज्वर में लंघन जो।
स्वास्थ्य का नहीं, उलंघन हो ॥37॥

आमद कम, खर्चा अपार।
एक अनार, सौ बीमार ॥38॥

प्रातः टहलें, मिले हवा।
सौ रोगों की, एक दवा ॥39॥

अधिक शक्कर व, नमक जहाँ हो।
व्याधि–जनक ही, जहर वहाँ हो ॥40॥

भूख से ज्यादा, कभी न खाना।
बिना परिश्रम, न सो जाना ॥41॥

गेंहूँ उष्ण, कुछ भारी होता।
बली तेजस्वी, तप को ढोता ॥42॥

बड़ी शक्ति हो, चने चबाता।
ज्ञानी ज्ञान–समझ, निज–पाता ॥43॥

गाय–दुग्ध, घृत, शीतल होता।
निर्मल दृष्टि,तप–शक्ति संजोता ॥44॥

गाय दुग्ध, घृत, अमृत ऐसा।
शक्ति तेज दे, पाचन जैसा ॥45॥

तक्र सुपाच्य, सुशीतल होवे।
ध्यानी सरल, सुशांति में खोवे ॥46॥

उष्ण बाजरा, सुपाच्य भी हो।
प्रखर प्रवक्ता, उदार भी हो ॥47॥

मक्का सौम्य, सुपाचक होता।
वक्ता सुंदर, वाचक होता ॥48॥

तन्दुल रजत-सा, शीतल माना ।
तप-साधक, विधि सुपाच्य जाना ॥49॥

ज्वर आदिक में, मूंग है प्यारी।
धर्म साधना-में गुणकारी ॥50॥

होवे आंवला, सौम्य व शीतल।
शिव-साधकतम दृष्टि, निर्मल ॥51॥

यथा मुनक्का, पाच्य विरेचक।
तथा साधु-वच, हितैषी रोचक ॥52॥

यथा हरिद्रा, व्याधि नाशक।
तथा स्वस्थ, समाधि उपासक ॥53॥

मेंथी शूल वा, वादि नाशक।
दूर; व्याधि-भव, जिनेन्द्र उपासक ॥54॥

सेवफल सुपाच्य ठण्डा माना।
उदर नरम तेजोदय जाना ॥55॥

केला शक्ति–दायक फल है।
भारी सुदेर पाचक फल है ॥56॥

अमरूद भूख व अग्नि बढ़ाये।
शीत ऋतु में शक्ति लाये ॥57॥

रहा पपीता गर्म–सा फल है।
रहा विरेचक रोग का हल है ॥58॥

लोकी, परवल लाभ बढ़ाये।
अमृत सदृश व्याधि हटाये ॥59॥

बादाम काजू गरिष्ठ होते।
पचा सके जो शक्ति जोते ॥60॥

अखरोट सेहत को गुणकारी।
हृदय व जोड़ में बने सहाई ॥61॥

जीरा ठण्डा, वायु कारक।
सेवे होता, ज्योति–धारक॥62॥

सौंफ, धना, ठण्ड हैं भरते।
सुपाच्य सुगन्धि, मन भी हरते॥63॥

अडूसा खाँसी को हरता है।
खजूर गर्म, शक्ति भरता है॥64॥

सौंठ सर्दी को हर लेती।
मुलेठी कण्ठ स्वच्छ कर देती॥65॥

आजवाइन पाचक है होती।
लोंग गर्म, मुख शुद्धि करती॥66॥

इलायची ठण्डी है होती।
मुख शुद्धि सह खुसबू भरती॥67॥

काली मिर्च पाचक होती।
कण्ठ साफ कर ठण्डक देती॥68॥

गिलोय रोग प्रतिरोधक है।
शक्ति भरे तन पोषक है ॥ 69 ॥

तुलसी ज्वर को हर लेती।
तन को स्वस्थ भी कर देती ॥ 70 ॥

पिपली कफ हारक होती।
खाँसी में राहत देती ॥ 71 ॥

नीम पित्त को है हरती।
ब्राह्मी दिमाग ठण्डा रखती ॥ 72 ॥

गोंद पचाये, कोई जिसे-।
-शक्ति देती बहुत उसे ॥ 73 ॥

उदर स्वच्छ भी गोंद करे।
तन तेजस में काम करे ॥ 74 ॥

चंदन जलन को दूर करे।
बबूल दन्त में शक्ति भरे ॥ 75 ॥

चिरायता गुरबेल कषाय।
सेवे कुछ दिन ज्वर भी जाय॥76॥

नरियल तैल सेवा में हो।
तन शीतलता–सह वह हो॥77॥

सरसों तैल शीत हरता।
जल–सह हो ठण्डा करता॥78॥

एरण्ड देता जलन हटा।
घाव भरे वह पथरचटा॥79॥

दवा प्रयोग में, वैद्य हाथ हो।
रोग मिटे,जब पुण्य साथ हो॥80॥

सदाचार सूक्ति काव्य

राज्यादर्श-दृश्य

- देशीवस्तु
- अनुशासन
- सच्चे सैनिक
- भारत का कैलाश
- तीर्थंकर मोक्ष स्थल
- भरत, बाहुबली
- दिगम्बर-गोम्म्टेश-बाहुबली
- विदेह-तीर्थंकर
- संस्कृति-रक्षा
- निरपराध-जीवन

राज्यादर्श दृश्य

देशी वस्तु में आदर हो।
मन संतोषी सागर हो ॥1॥

अनुशासन रखता निःस्वार्थ।
नृप-जीवन हो उपकारार्थ ॥2॥

चिंता छोड़ें, तन, परिजन।
सच्चे सैनिक, रक्षक जन ॥3॥

अपने पद-गौरव का ध्यान।
न खोता भवि स्वाभिमान ॥4॥

नहीं राज्य-विरोधी हों।
मुनि आत्म- विशोधी हों ॥5॥

भारत में कैलाश है न्यारा।
ऋषभ देव ने निर्वाण को धारा ॥6॥

सम्मेदगिरि विख्यात रहा है।
तीर्थंकर-जिन, मोक्ष लहा है ॥7॥

चम्पापुर से वासुपूज्य जिन।
मोक्ष गये हम नमते निशदिन ॥8॥

गिरनार गिरि यह सिद्धि धाम है।
नेमिनाथ का मोक्ष धाम है ॥9॥

पावापुरी है, क्षेत्र निराला।
महावीर शिव–मिला उजाला ॥10॥

भारत में बाहुबली प्रतिमा।
जग प्रसिद्ध, जग–पूजित प्रतिमा ॥11॥

पूर्ण विश्व के नग्न–दिगम्बर।
प्रकृति शोभा,पूज्य दिगम्बर ॥12॥

प्रभु आश्चर्य, पूर्ण विश्व का।
नमते, बढ़ता पुण्य विश्व का ॥13॥

गोम्मट से हुए, गोमटेश–जिन।
नमते, भरते पुण्य कोष जिन ॥14॥

विदेह क्षेत्र, बीस तीर्थ जिन।
नमूँ शरण, शिव–मिले तीर्थ जिन ॥15॥

निम्न व्यक्ति को, निम्न ही भाता।
उच्च आचरण, नहीं सुहाता ॥ 16 ॥

श्वान को कितना, खिलायें मिष्ठा।
प्रकृति न बदले, भाये विष्ठा ॥ 17 ॥

अन्याय करते, भय न लेश हो।
जिसकी लाठी, उसकी भैंस हो ॥ 18 ॥

जहाँ स्वार्थी, आदमी देश हो।
पिछड़े संस्कृति, दूषित वेश हो ॥ 19 ॥

अनेक जाति व, अनेक मत हैं।
अविरोधी जन, देश निरत हैं ॥ 20 ॥

सुखी रहें सब, शान्त हो प्रजा।
न अन्याय, न मिले ही सजा ॥ 21 ॥

अपराधों का, नाम नहीं हो।
धर्म सौख्य-मय, ही जीवन हो ॥ 22 ॥

सदाचार सूक्ति काव्य

चारित्र-दृश्य

- मोक्षमार्ग
- पञ्च-पाप से दुर्गति
- समदर्शी की सुगति
- दान का फल
- सम्यक्त्व-अंग
- अभक्ष्य-त्याग
- ग्यारह-प्रतिमा
- षोडश-कारण
- पुरुषार्थ
- नियत-अनियत
- निमित्त-उपादान
- दैव-पुरुषार्थ
- विहार
- उपकरण
- निश्चय-व्यवहार
- समीचीन-पर्व
- पंच-कल्याणक
- एक सौ आठ
- दस-लक्षण
- बारह-तप

चारित्र दृश्य

दर्श, ज्ञान, व्रत, सम्यक् धार।
मोक्षमार्ग से, हो जग पार ॥1॥

निरपराध जो मारे जीव।
निश्चित नारक दुःख अतीव ॥2॥

सत्य बात को पलटे जो।
नारक दुःख में पड़ता वो ॥3॥

पर धन हड़पे, मुकरे जो।
शीघ्र ही पशु–दुःख पावे वो ॥4॥

कुशीलता कर, जो छलता।
नारक, पशुगति, में पड़ता ॥5॥

बहु–आरंभी, धन लूटे।
नरक जाये, जब तन छूटे ॥6॥

मिथ्यादर्शी दान करे।
कुभोग–भू को प्राप्त करे ॥ 7॥

जो समदर्शी दान करे।
स्वर्ग–सुखों को आप वरे ॥8॥

चार दान देते श्रीमान।
धन्य उदारता कही महान॥9॥

नहीं; ज्ञान–बेचते शान।
सच्चे कहलाते धीमान ॥10॥

भूली वस्तु भी दें, ईमान।
बिन पूछे न लें श्रीमान ॥11॥

जहाँ पाप का त्याग नहीं।
राग–द्वेष परिहार नहीं ॥12॥

रागी पूजे राग मिले।
जैसा जीवन वहीं ढले ॥13॥

गन्दा जल, क्या स्वच्छ करे ?
रागी पाप–अनुरक्त करे ॥14॥

स्व–बड़ाई, निंदा करता।
नीच गोत्र में वह पड़ता॥15॥

क्षण–क्षण में झगड़ा करता।
कुरूप तन को वह वरता ॥ 16 ॥

पर–गुण गाता जो प्राणी।
उच्च गोत्र पाता प्राणी ॥ 17 ॥

बाधा सहे, न बाधक हो।
रूपवान बन, साधक हो ॥ 18 ॥

वीतराग–थुति गान करे।
कामदेव–सम रूप धरे ॥ 19 ॥

असंयमी न रखना साथ।
पापानुमोदन होती माथ ॥ 20 ॥

मिथ्यात्वी न होवे पास।
सरागता का न हो वास ॥ 21 ॥

असंख्यात गुणित कर्म हैं जलते।
अणु, महाव्रती जो हैं बनते ॥ 22 ॥

तिजोरी–रक्षित, रत्न सुमूल्य।
चेतन सुरक्षित, रत्न अमूल्य ॥ 23 ॥

रूढ़ी छुड़ाते, फिर क्यों आती?
छुटाते पुनः हि, चिपके माटी ॥24॥

गुड़ में कड़वी, दवा सुहाती।
व्रत–महिमा, जिन–वच–सह भाती ॥25॥

सम्यक्त्व के अष्ट अंग

धर्म–क्षेत्र में निशंक बनना।
सूर्य–समा न रुकना, चलना ॥26॥

बिना विषय रम, कांक्षा तजना।
चन्द्र–समा तुम, शीतल बनना ॥27॥

नहीं किसी से, घृणा हि करना।
वैद्य–समा हो, सेवा करना ॥28॥

मिथ्यामत लख, मोह न करना।
सम–दृष्टि बन, अमूढ़ रहना ॥29॥

न पत्थर, न पहाड़ भजना।
वीतराग–गुणी आत्महि भजना ॥30॥

न सागर, न नदी पूजना।
मात्र प्रतिष्ठित, विराग पूजना ॥31॥

नहिं किसी के दोष हि कहना।
छत्र-समा उपगूहन गहना ॥32॥

सदा दोष उपचार हि करना।
मार्ग गिरे को राह पकड़ना ॥33॥

सदा भविक को, अपना कहना।
यथा योग्य, उपहार हि वरना ॥34॥

चारों दिशि में, प्रभाव करना।
पूजा, दान से, सुपुण्य भरना ॥35॥

अभक्ष्य त्याग

पंच अभक्ष्य, सदा को तजते।
सदाचार को, नियमित भजते ॥36॥

त्रस, बहुघात, अनिष्ट वर्जक हों।
तजें अनुपसेव्य, प्रमाद वर्धक हो ॥37॥

ग्यारह प्रतिमा गुण

दर्शन, व्रत, सामायिक आदि।
ग्यारह गृही के गुण अनादि ॥ 38 ॥

सम्यग्दर्शन–सह व्रत पालन।
सामायिक व प्रोषध धारण ॥ 39 ॥

सचित्त वस्तु तज, रात्रि भुक्ति न।
ब्रह्मचर्य धर, खोएँ शक्ति न ॥ 40 ॥

आरम्भ त्यागी, परिग्रह छोड़ें।
अनुमोदन से भी, मुख को मोड़ें ॥ 41 ॥

न ही निमंत्रित–भिक्षा धारें।
गृह त्यागें गुरु, शरणा धारें ॥ 42 ॥

षोडशकारण भावनाएं

दर्शन निर्मल, विनय जु धारता।
शीलाचारी, व्रत सु–धारता ॥ 43 ॥

नित ही श्रुत में, रमता है जो।
नित्य पाप से, डरता है वो ॥ 44 ॥

शक्ति पूर्वक, त्याग है करता।
पूर्ण शक्ति से, तप में रहता ॥45॥

साधु रक्षा, सेवा सुभक्ति हो।
अर्हत् सूरि बहु-श्रुत प्रवचन हों ॥46॥

आवश्यक भी, यथा काल हों।
मार्ग-प्रभावन, तथा काल हो ॥47॥

साधर्मी में, प्रेम-भाव हो।
जन-कल्याण में, स्व-स्वभाव हो ॥48॥

सोलह-भावन भाने वाले।
मोक्षमार्ग के भाव सम्हालें ॥49॥

तीर्थंकर है, जिनको बनना।
तीर्थोदय निज, काव्य को पढ़ना ॥50॥

उत्तम निर्मल, विशुद्धि बढ़ावें।
तीर्थंकर बन, शिव-पद पावें ॥51॥

पुरुषार्थ, नियत-अनियत

जहाँ बने पुरुषार्थ से काम।
अनियत जानो उसका नाम।52॥

होनहार जो निश्चित होय।
नियत पर्याय न, विचलित होय ॥53॥

निमित्त, उपादान पुरुषार्थ

साधन, कारण, निमित्त कहो।
साधन से ही, साध्य गहो॥54॥

साधन मात्र से, साध्य न मिलता।
रहे निरर्थक, फल बिन पात्रता ॥55॥

साध्य उसे ही, मिल पाता वह।
उपादान सह, निमित्त हो जहँ॥56॥

उपादान बलवन्त जब रहता।
निमित्त सहज ही तब है मिलता ॥57॥

उपादान बलवान जब नहीं।
निमित्त सह भी, काम हो नहीं ॥58॥

हो पुरुषार्थी, निमित्त बलवान।
कार्य बनें निश्चित सब मान ॥59॥

कार्य पूर्ण बस, निमित्त दूर वह।
कार्य में ढले उपादान पूर्ण वह ॥60॥

दैव, पुरुषार्थ

सुदृढ़ कर्म ही दैव कहाता।
पुरुषार्थ जहँ ढीला हो जाता ॥61॥

पुरुषार्थ करते कार्य पूर्ण हो।
नहीं दैव तब प्रमुख पूर्ण हो ॥62॥

संयोग-वियोग की अद्भुत् जोड़ी है।
वीतराग ने जिसको तोड़ी है ॥63॥

त्रय मुनि संघ को गण हैं कहते।
धर्म-साध वे, विचरण करते ॥64॥

सप्त मुनिवर, गच्छ कहायें।
सप्त ऋषि सम, जग सुख लाएं ॥65॥

न एकाकी विहार कदा हो।
गुरु–आज्ञा, स्वीकार सदा हो ॥66॥

पिच्छी, कमण्डल, ग्रन्थ अचेतन।
साथ उपकरण, शिष्य हैं चेतन ॥67॥

गुरु आज्ञा बिन, संघ न लेवें।
अचौर्य भावना, हिय भर लेवें ॥68॥

त्रिकाल ध्यानी, साम्य धनी हैं।
निर्विकल्प व, शान्त मौनी हैं ॥69॥

हाथ जोड़, गुरु–चरण निवेदन।
वचन पालते, सेवा में मन ॥70॥

ज्ञानी संयमी समता धार।
गुप्ति शुद्ध–उपयोग विचार ॥71॥

पाप–विरत मुनि, आतम लीन।
आत्मानुभूति कर, स्वाधीन ॥72॥

पाप तजे, शुद्धातम ध्यान।
उसे ही निश्चय उत्तम मान ॥73॥

पर में अपनापन होता।
वहाँ व्यवहार प्रमुख होता ॥74॥

भोगी; भव–सुख हो इस भव में।
त्यागी मुनि आत्मानुभव में ॥75॥

गृही के विषय अनुभूति हो।
सम–रत मुनि स्व–अनुभूति हो ॥76॥

समीचीन पर्व

इक्षु दण्ड के पर्व मिष्ठ हैं।
पर्व मनावें भव्य इष्ट हैं ॥77॥

अक्षय तृतीया पर्व महोत्सव।
दान पुण्य का आदिम उत्सव ॥78॥

नर नारी, कृत– संकल्पित हों।
अक्षय मुहूर्त्त पाणी ग्रहीत हों ॥79॥

श्रुत पंचमी पर्व है आता।
आगम रचना को दर्शाता ॥80॥

गुरु पूर्णिमा पर्व सु–प्यारा।
गुरु–आशी का अवसर न्यारा ॥81॥

वीर–शासन जयंती उत्सव।
जिनशासन उद्गम महोत्सव ॥82॥

वर्षायोग, धर्म–जल वर्षे।
साधु मिलते, श्रावक हर्षे ॥83॥

मोक्ष–सप्तमी सबको भाये।
पार्श्वनाथ की शरण दिलाये ॥84॥

भाद्र मास राजा वत् शोभे।
व्रत–संयम सु–खजाना होवे ॥85॥

षोडशकारण महापर्व है।
तीर्थंकर पद सौख्य सर्व है ॥86॥

रक्षाबंधन, रक्षा करता।
मुनि–धर्म में वत्सल धरता ॥87॥

धर्म–रक्षण संकल्प कराये।
भ्रात, बहिन में नेह बढ़ाये ॥88॥

दस लक्षण यह पर्व महा है।
महा पुण्य का कोश जहाँ है ॥89॥

पंच मेरु का पर्व सुहाता।
पंच मेरु गिरि के गुण गाता ॥90॥

अनन्त चतुर्दशी पर्वोत्तम है।
अनन्त-शिव-सुख दे उत्तम है ॥91॥

रत्नत्रय का पर्व मनावें।
मोक्षमार्ग के सुख को पावें ॥92॥

दीपावली शुभ पर्व है न्यारा।
महावीर ने शिवपद धारा ॥93॥

आदिनाथ का मोक्ष मनाते।
कर्म-निर्जरा, मुक्ति पाते ॥94॥

अष्टान्हिका पर्व पूर्ण है।
नन्दीश्वर वंदन सुपूर्ण है ॥95॥

आदिनाथ जयंती आती।
आदिम युग की याद दिलाती ॥96॥

वीर–जयंती सबको प्यारी।
धर्म अहिंसा की रखवारी ॥97॥

सदा अष्टमी पर्व मनावें।
अष्ट कर्म को शीघ्र नशावें ॥98॥

चतुर्दशी जो पर्व मनावें।
चौदह गुण पा शिव–पद पावें ॥99॥

पंचकल्याणक तिथि मनाते।
कल्याणक का वैभव पाते ॥100॥

गर्भ–कल्याणक महान बनायें।
संस्कारों का, रोप करायें ॥101॥

जन्म कल्याणक पुनर्जन्म ना।
–पाना, भव में पुनः न आना ॥102॥

दीक्षा–कल्याणक, त्याग सिखाता।
निर्ग्रन्थ बनना हमें बताता ॥103॥

ज्ञान–कल्याणक समवशरण में।
भविजन आते, प्रभो शरण में ॥104॥

केवलज्ञानी जन्म मुक्त हैं।
सर्व–दर्शिता पूर्ण युक्त हैं ॥ 105 ॥

मोक्ष–कल्याणक कर्म–मुक्त हो।
शिव–पद पाते स्वभाव युक्त हो ॥ 106 ॥

माला मणि इक सौ–आठ जो होवें।
मुनि वैद्य से, भव दुःख खोवें ॥ 107 ॥

मुनिवर एक सौ आठ कहाते।
आस्त्रव एक सौ आठ हटाते ॥ 108 ॥

दशलक्षणधर्म

दसलक्षण, मुनि उत्तम पालें।
मोक्ष सु–फल को निश्चित पा लें ॥ 109 ॥

नहीं क्रोध किंचित भी करते।
क्षमा–धर्म को निश्चित धरते ॥ 110 ॥

मान कषाय दूर से तजते।
मार्दवता से भविजन सजते ॥ 111 ॥

माया तज, सरल जो बनते।
आर्जव-धर्म को भविजन वरते ॥ 112 ॥

प्रचुर लोभ का त्याग करें जो।
शौच-धर्म को शीघ्र वरें वो ॥ 113 ॥

असत्य वचन न बोलें ज्ञानी।
सद्-व्यवहार सत्य धर मौनी ॥ 114 ॥

जीव बचाते, विषय-मोह ना।
संयम बनता, उनका गहना ॥ 115 ॥

बारह तप में आत्म तपाते।
जीवन तप मय शोभा पाते ॥ 116 ॥

रत्नत्रय वे मुनिवर देवें।
त्याग-धर्म, भव नैया खेवें ॥ 117 ॥

किंचित मात्र न परिग्रह रखते।
आकिंचन्य धर्म में रमते ॥ 118 ॥

आत्म-ब्रह्म में लीन रहें जो।
ब्रह्मचर्य स्वाधीन रहें वो ॥ 119 ॥

उत्तम–क्षमादि–योग धर्म हैं।
मोक्ष दिलाते, जानो मर्म यह ॥ 120 ॥

निमित्त की अनिवार्यता

धर्मास्तिकाय उत्तम सु हेतु है।
सिद्धशिला जाने में सेतु है ॥ 121 ॥

अनन्त–शक्ति पर, धर्म बिना ना।
रहा असंभव, सिद्धालय जाना ॥ 122 ॥

सिद्धों के उस उपादान सह।
निमित्त होना, अवश्य आशय ॥ 123 ॥

भले निमित्त वह उदासीन हो।
उपादान सह रहे आसीन हो ॥ 124 ॥

मार्गणा गुणस्थान का लक्षण

जीव खोजना, रही मार्गणा।
जीव बचाना, बने धारणा ॥ 125 ॥

गुणस्थान, भावों का खेल।
मिथ्यात्वादि, भव की जेल ॥ 126 ॥

सदाचार सूक्ति काव्य

तप-साधना-दृश्य

- तप की शक्ति
- तपा न चूंवें
- दुग्ध तपाते
- घृत-सम शिवसुख
- संयम से शोभा
- युवा करें तप
- उपवास में नाथ
- अवमौदर्य का सुख
- नियम सम्हारना
- रस-व्यंजन-परिहार
- एकान्तवास
- कठिन-योग
- अपराध-शुद्धि
- मान-गलाना
- मुनिगण-सेवा
- तत्त्वमंथन
- कायिक-निर्मोह
- ध्यान से तरना

तप साधना दृश्य

क्षण भर तप, विधि को है हरता।
परमाणु–समा शक्ति ही भरता ॥1॥

सूर्य तपे–सम, तप कहलाते।
ना चूंवें, तब वर्षा पाते ॥2॥

दुग्ध से घृत पा, युक्ति रूप से।
तन से निज पा, मुक्ति रूप से ॥3॥

घृत वह पुनः न, दुग्ध में आता।
शिव–पद फिर, भव न पाता ॥4॥

सद्–दान देवे, स्वर्ग मोक्ष सुख।
निदान देता, पाप बढ़ा दुःख ॥5॥

उम्र भोग में मात्र न खोवें।
संयम रखते भविजन शोभें ॥6॥

युवावस्था में तप होता।
वृद्ध होयँ, न तप को ढोता ॥7॥

बारह-तप

चार अशन को जब हो तजना।
कर उपवास, नाथ को भजना ॥8॥

थोड़ा खाकर, हल्का रहना।
अवमोदर्य का सौख्य है वरना ॥9॥

तरह-तरह के नियम धारना।
वृत्ति-परिसंख्यान सम्हारना ॥10॥

षट्रस व्यंजन त्याग, साधना।
परम विशुद्धि-मयाराधना ॥11॥

शून्य-स्थल एकांत-वास हो।
विविक्त-शय्यासन निवास हो ॥12॥

कठिन-कठिन योगों को धरना।
कायक्लेश कर, भव-सुख तजना ॥13॥

हो अपराध, गुरु से कहना।
कर प्रायश्चित्त, निज-शुद्धि करना ॥14॥

सदा गुणी के विनयी बनना।
मान गलाकर मोक्ष हि वरना ॥ 15 ॥

मुनिगण–वैय्यावृत्ति करना।
श्रम, थकावट, रोग भी हरना ॥ 16 ॥

सदा तत्त्व का मंथन करना।
अनुयोगों को पढ़ सुख गहना ॥ 17 ॥

काया के भी मोह को तजना।
व्युत्सर्गी बन, निज को भजना ॥ 18 ॥

आर्त्त रौद्र तज,धर्म सुमरणा।
शुक्ल–ध्यान से, भवोदधि तरणा ॥ 19 ॥

सदाचार सूक्ति काव्य

ध्यान–दृश्य

- ध्यान के भेद
- योगी, भोगी का लक्षण
- नाशाग्र–दृष्टि
- भोग्य लड्डू समान
- अनुप्रेक्षा–चिंतवन
- ओम् का ध्यान
- प्राणायाम
- ह्रीं का ध्यान
- श्री का ध्यान
- पञ्च–धारणा

ध्यान–दृश्य

धर्म–शुक्ल ये, हैं शुभ–ध्यान।
इनको ध्याने में कल्याण ॥ 1 ॥

आज्ञा, अपाय, विपाक, संस्थान।
जानें इनको धर्म सु–ध्यान ॥ 2 ॥

अशुभ व शुभ–मन है संसार।
शुद्ध–मनस् से भव–उद्धार ॥ 3 ॥

भोग त्यागता, योगी कहाय।
योगी वह ध्यानी कहलाय ॥ 4 ॥

पर को पर व, रज–सम कहना।
मिले स्वतः पर, ना वह गहना ॥ 5 ॥

भोग्य–विषय लड्डू–सम होता।
गुटक सको–न–बाहर होता ॥ 6 ॥

नाशाग्र हि दृष्टि, योगी रखता।
ध्यान–लीन हो, निजसुख चखता ॥ 7 ॥

बंद पंख खग, नीड में में जाय।
योग–वशी योगि, ध्यानि कहाय ॥ 8 ॥

अनुप्रेक्षा–चिन्तन

जो कुछ दिखता, शाश्वत न है।
प्रतिक्षण होता नाश, यहाँ है ॥ 9 ॥

मरते समय न कोई बचाता।
अशरण यह संसार कहाता ॥ 10 ॥

चतुर्गति में जीव भ्रमे यह।
स्वयं कर्म का फल भोगे वह ॥ 11 ॥

आप अकेला, कर्म है करता।
जैसी करनी, स्वयं ही भरता ॥ 12 ॥

देह जुदी है आत्म जुदा है।
नीर दूध–सम, मोह मुदा है ॥ 13 ॥

पुदगल– मय यह तन न भाये।
पदार्थ घिनोने सदा बहाये ॥ 14 ॥

मिथ्यात्व आदिक, आस्रव कारण।
योग कषाय तज, होय निवारण ॥ 15 ॥

गुप्ति समिति आदिक जब पाले।
संवर-मय जीवन को ढाले ॥ 16 ॥

स्वकाल पहले कर्म निकाले।
अविपाक निर्जरा का अवसर ले ॥ 17 ॥

तीन लोक यह, अनादि से है।
न बन मिटता, कत्तादि से है ॥ 18 ॥

मोक्षमार्ग में, श्रद्धा जब जागे।
बोधि मिले तब, सब भ्रम भागे ॥ 19 ॥

धर्म अहिंसा, रत्नत्रय मय।
पूज्य बनाता, होती जय-जय ॥ 20 ॥

ओम् है पञ्च प्रभु का रूप।
ध्यावें; बनते प्रभु-अनुरूप ॥ 21 ॥

पवन उदर भर, पूरक होता।
रुके उदर में, कुम्भक होता ॥ 22 ॥

धीमी वायु से, उदर रिक्त हो।
रेचक जानो, योगी स्वस्थ हो ॥ 23 ॥

ओम् का नित्य, ध्यान शुभ करना।
पंच-प्रभो का, पद भी गहना ॥ 24 ॥

ह्रीं, अक्षर चौबीसी रूप।
ध्याता पाता आप्त स्वरूप ॥ 25 ॥

ह्रीं ध्यान को जो है करता।
चौबीसी प्रभु गुण है वरता ॥ 26 ॥

श्रीकार शिव-लक्ष्मी कहाता।
ध्यानी यति शिवपद को पाता ॥ 27 ॥

पृथ्वी, अग्नि, वायु, धारणा।
जल, तत्त्व की करें विचारणा ॥ 28 ॥

ध्यान में मन शुभ-रंजित होना।
पाप-विषयों में, कदा न खोना ॥ 29 ॥

सम्यक् ध्यान में अगर उतरना।
'सम्यक् ध्यान शतक' नित पढ़ना ॥ 30 ॥

पंच धारणाएँ

पंच तरह की धारणा, करता ध्यानी होय।
पृथ्वी, अग्नि, वायु, जल, और तत्त्व संजोय।।

पृथ्वीधारणा

मध्य लोक है क्षीर सम, सागर शान्त स्वरूप।
जम्बूद्वीप सहस्रदल, इक लख योजन रूप।।
वहाँ कर्णिका मध्य में, श्वेतासन शुभ रूप।
जहाँ विराजित आतमा, बन निर्ग्रन्थ स्वरूप।।

अग्निधारणा

निज नाभि में ऊर्ध्वमुख, स्वर्णिम दल शुभ मान।
सोलह पांखुड़ि स्वर बसें, मध्य बसे र्हं जान।।
अधो मुखी हिय मध्य में, कमल विराजित सोह।
अष्ट पाँखुड़ी कर्म की, दहे ध्यान र्हं होह।।
आतम में प्रकटें जहाँ, गुण अनन्त अभिराम।
सिद्ध बने परमात्मा, सिद्ध हुए सब काम।।
घृत जैसे महके पुनः नहीं दुग्ध में आय।
भव में न अवतार ले, शिव में आतम भाय।।
सकल ज्ञेय ज्ञायक बने, झलकें सभी पदार्थ।
दर्पण वत् आदर्श हैं, गुण अनन्त परमार्थ।।

वायु और जलधारणा

कर्मराख को तीव्र वह, मारुत करती साफ।
मेघों के उस नीर से, थल भी धुलता आप।।

तत्त्व धारणा

यह शुद्धात्म अजीव से, भिन्न सिद्ध है जीव।
परम तत्त्व दर्शन तथा, ज्ञान सहित मम–जीव।।

साभार : सम्यक् ध्यान शतक – रचयिता आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज

सदाचार सूक्ति काव्य

सल्लेखना-भाव-दृश्य

- कलम व लेखन
- कषाय-शोधन
- वीर-मरण
- शुभ-मंत्र
- परमेष्ठी-ध्यान
- अंतिम-पड़ाव
- स्वतत्त्व निज-भज
- सिद्ध-ज्योति
- शिव-सुख मोक्ष

सल्लेखना-भाव दृश्य

च्युत, च्यावित व त्यक्त मरण।
त्रिविध में, व्यक्त प्रशस्त मरण ॥ 1 ॥

च्युत में नशती स्वयं उम्र है।
च्यावित नशे जहाँ उम्र वह ॥ 2 ॥

त्यक्त में आहार, स्वयं छोड़ता।
सल्लेखन में मनस् जोड़ता ॥ 3 ॥

त्यक्त मरण है, त्रिविध मरण।
प्रायोपगमन जहँ, प्रथम मरण ॥ 4 ॥

द्वितीय मरण इंगिनी मरण।
भक्त प्रत्याख्यान अंत मरण ॥ 5 ॥

प्रायोपगमन में त्याग आहार।
गुप्ति-लीन मुनि आत्म-विचार ॥ 6 ॥

इंगिनिमरण में ना आहार।
स्वयं सेव हो, स्वयं सम्हार ॥ 7 ॥

भक्त–आहार जहँ, क्रमशः त्याग।
नहीं जगत् से होता राग ॥ 8 ॥

मुनि–सेवा सह आत्म सम्हार।
वर्तमान सल्लेखन धार ॥ 9 ॥

स्याही लेखन, करे कलम यह।
कृश कषाय तन, अंत धरम वह ॥ 10 ॥

शरीर शक्ति जब खोती यह।
जलाओ सल्लेखन ज्योति वह ॥ 11 ॥

भोजन कम, तन कृश करना।
कषाय का नित, शोधन करना ॥ 12 ॥

हल्का होता जहाँ शरीर।
वीर–मरण को पाये धीर ॥ 13 ॥

णमोकार शुभ–मंत्र महान।
अन्त भी ध्याना इसको जान ॥ 14 ॥

परमेष्ठी का ध्यान रहा जहँ।
अंतिम पड़ाव पूर्ण कहा वह ॥ 15 ॥

सम्यग्दृष्टि सद्‌गति जाते।
व्रती स्वर्ग में ऋद्धि पाते ॥ 16 ॥

मुनि, अहमिद्र बन, श्रुत भी पाते।
इक, द्वि भव में, मोक्ष भी जाते ॥ 17 ॥

लोक-कल्याण की, भावन करते।
तीर्थंकर बन, भव से तिरते ॥ 18 ॥

जिन-भक्ति से मन जहँ भरता।
चिर-संचित, पापों को हरता ॥ 19 ॥

स्वतत्त्व निज भी, साथ रहा जहँ।
निज-भज, सद्गति देय महामह ॥ 20 ॥

सिद्ध-ज्योति जहँ, जले सदा ही।
अखण्ड ज्योति न बुझे कदा भी ॥ 21 ॥

अनंत किये हैं, जन्म मरण वे।
शिव सुख देता, वीर-मरण ये ॥ 22 ॥

सदाचार सूक्ति काव्य

अंत्य–मंगल

- नीतिज्ञ–हर्ष
- भरत का भारत
- आर्यखंड में बुन्देलखण्ड
- गुरु–कृपा शिरोधार्य
- आर्जव–निधि
- काव्य–रचा
- निज–वासी

अंत्य- मंगल

सदाचार–सूक्ति–काव्य रचाया।
नीतिज्ञों का, मन हर्षाया ॥1॥

चक्री भरत का, भरत देश है।
पूर्ण विश्व में, उत्तम–देश है ॥2॥

तीर्थ उदित हो आर्य–खण्ड में।
व्रती–खजाना बुन्देलखण्ड में ॥3॥

बुन्देलखण्ड में तालबेहट है।
पार्श्व– जिनालय, ताल का तट है ॥4॥

शुभ नगरी में, भाव– विशुद्धि।
काव्य बना, जग मन हो शुद्धि ॥5॥

वीर–मोक्ष का संवत् जानो।
पच्चीस सौ छियालीस मानो ॥6॥

ज्येष्ठ मास का योग रहा जहँ।
तप चलते संयोग मिला यह ॥7॥

गुरु विद्यासागराचार्य नम ।
कृपा; वचन तव, शिरोधार्य मम ॥ 8 ॥

आप–श्री से, मुनि–पद पाया ।
आर्जव–निधि दी, जग हर्षाया ॥ 9 ॥

तालबेहट में, काव्य रचा मौन ।
हुआ संपूर्ण जो, सुक्षेत्र सेरोन ॥ 10 ॥

आषाण कृष्णा, पंचमी मंगल ।
शुभ–तिथि काव्य, पूर्ण सुमंगल ॥ 11 ॥

पद्य लिखे हैं, छ सौ इक्तीस ।
पढ़े; बनें हम, जग के ईश ॥ 12 ॥

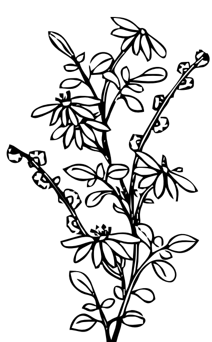

पदस्थध्यान

मंत्र वाक्य का ध्यान हो, वीतराग शुभ रूप।
पदस्थ जानो ध्यान वह, हो एकाग्र स्वरूप।।

णमोकार शुभ मंत्र है, सब मंत्रों का राज।
शीघ्र अशुभ विधि नाशकर, सिद्ध बनावे काज।।

ओम् महा यह मंत्र है, परमेष्ठी का बीज।
द्वादशांग सागर कहें, भव सुख, शिव की चीज।।

ई अक्षर जिन बुद्ध वा, हरि ब्रह्मा शिव रूप।
केवलज्ञानी, सार्वमय, जगत वंद्य सुख रूप।।

अर्हं अक्षर श्रेष्ठ है, अर्हत् पद का नाम।
पूज्य रहे जो लोक में, ध्यावें, बनते काम।।

ह्राँ रहा अरिहंत का, वाचक श्रेष्ठ महान।
घातिकर्म का नाश कर, जीवन मुक्त सुजान।।

ह्रीं रहा श्री सिद्ध का, वाचक श्रेष्ठ महान।
अष्ट कर्म का नाशकर, गुण अनन्त की खान।।

ह्रूँ रहा आचार्य का, वाचक श्रेष्ठ महान।
पंचाचार प्रधान हैं, करें सर्व कल्याण।।

ह्रौं श्रेष्ठ वाचक सुधी, उपाध्याय का नाम।
द्वादशाङ्ग के ज्ञान से, मुनि पाते शिवधाम।।

ह्रः अक्षर यह साधु का, वाचक श्रेष्ठ महान।
रत्नत्रय से आत्म में, लीन करें निज ध्यान।।

अग्र ओम् पीछे जहाँ, नमः लगावें साथ।
उपरिम अक्षर जाप दें, बनें लोक में नाथ।।

साभार : सम्यक् ध्यान शतक – रचयिता आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज

आध्यात्मिक कविताएँ

कोरोना

कोरोना का संकट आया, शब्द-शब्द में कोरोना।
देश का कोना-कोना कहता, स्वास्थ्य मिले बस कोरोना॥

हुई प्रकृति नाराज जगत् की, चारित्र विकृति का होना।
पशु-पक्षी की जान गँवाई, पेट भरा लख उनको ना॥
कोरोना का संकट आया, शब्द-शब्द में कोरोना।
देश का कोना-कोना कहता, स्वास्थ्य मिले बस कोरोना॥

अन्याय-अनीति को अपनाया, लख विकास देश का ना।
धन रखा विदेश में जाकर, घूमा विदेश कोना-कोना॥
कोरोना का संकट आया, शब्द-शब्द में कोरोना।
देश का कोना-कोना कहता, स्वास्थ्य मिले बस कोरोना॥

विदेशी फैशन वस्तुएँ लाई, विदेशी मुद्रा लालच आयी।
माँस निर्यात को दिया बढ़ावा, हाथ लगा संस्कृति खोना॥
कोरोना का संकट आया, शब्द-शब्द में कोरोना।
देश का कोना-कोना कहता, स्वास्थ्य मिले बस कोरोना॥

संकट में प्रभु याद ही आते, पुण्य बढ़े सब दुख मिट जाते।
महावीर का जन्म मनाओ, करो प्रकाश कोना-कोना॥
कोरोना का संकट आया, शब्द-शब्द में कोरोना।
देश का कोना-कोना कहता, स्वास्थ्य मिले बस कोरोना॥

वर्तमान में वर्द्धमान को, न भूलो, उन्हें याद करो।
लखो उन्हें, हिय कपाट खोलो, भरो पुण्य, भव न खोना॥
कोरोना का संकट आया, शब्द-शब्द में कोरोना।
देश का कोना-कोना कहता, स्वास्थ्य मिले बस कोरोना॥

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी
वीर निर्वाण संवत् 2546
तारीख 05-04-2020

अपने घर आओ

ज्ञान-ज्योति अंतस् में बस,
जगा अपने घर आओ।

धर्म-पथ में पावन होकर,
धर्मी के गुण गाओ।

कभी प्लेग बाढ़ से या,
भूकंप व गैस से भी,
परमाणु का वायरस से उस,
कोरोना संकट से भी।
निर्धन हो या धनिक भी हो,
कर्म-फल चखना होता।
नहीं बाँटने आता कोई,
किये पाप का गम होता।
गम के उस काल में तुम,
समता से काम लेना।
परीक्षा की घड़ियों में,
धर्म न कदा ठुकराओ।
ज्ञान-ज्योति अंतस् में बस,
जगा, अपने घर आओ।

शत करीब वर्षों में वह,
महा-विकट आपद् आती।
जन-हानि व महा-दु:ख से,
धर्म करो यह याद लाती,
विषय-सुख के काल में तुम,
धर्म नहीं विसरा जाओ
ज्ञान-ज्योति अंतस् में बस,
जगा अपने घर आओ।

बाह्य उस खान-पान में,
व्यसन और ताम-झाम में,
नाम, झगड़े, अपव्यय में,
रोग जहर सा है घुलता।
व्यर्थ सैर और बनावट में,
मजा-मौज व भीड़-भाड़ में,
अन्याय अनीति स्वार्थ बाज में,
असाध्य रोग- फल मिलता।
रास्ता बस एक ही है,
स्वस्थ - धर्म अपनाओ।
ज्ञान-ज्योति अंतस् में बस,
जगा अपने घर आओ।

धर्म-पथ में पावन हो,
धर्मी के गुण गाओ।
बस अपने घर आओ॥

तालबेहट 10/04/2020

रहो अपने देश में

न जाओ तुम दूर भैया,
विधर्मी पर देश में,
धर्म-भू का कर्ज चुकाओ,
रहो अपने देश में।

प्रकृति की आपद् ही,
अपनों से दूर करती,
अरमानों के महलों को सब,
कब जाने चूर करती।
सारे रिश्ते, नाते भी,
मिटते हैं लेश में,
न जाओ तुम दूर भैया,
विधर्मी पर देश में।
धर्म-भू का कर्ज चुकाओ,
रहो अपने देश में।

धर्मायतन भी दूर होते,
स्वार्थ भरे चहरे होते,
न हृदय हि तृप्ति पाता,
मन भी खिन्न हो जाता,
रहो बंधु इसलिए तुम,
धर्म के परिवेश में।
न जाओ तुम दूर भैया,
विधर्मी पर देश में।
धर्म-भू का कर्ज चुकाओ,
रहो अपने देश में।

तालबेहट 19/04/2020

मोक्ष मिले अरमान

भारत देश महान है,
शाकाहार प्रधान है,
जान जहाँ जहान है,
मानवता पहचान है।

प्राण बचें ही इलाज है,
पुण्य-धर्म का काज है,
जीवन का शुभ साज है,
शिव-तट हेतु जहाज है।

समकित शुभ-श्रद्धान है,
ज्ञान वहाँ सम्मान है,
व्रत, पाप की हान है,
चारित ये शुभ काम है।

सौम्य-क्रिया पथ शान है,
मोक्ष-मार्ग जो नाम है,
ध्यान जहाँ, सुख खान है,
योग रहे सु-महान है।

निज में ही आराम है,
कर्म कटें शिवधाम है,
आत्म सुगुण की खान है,
यही सही पहचान है।

निरभिमान गुणवान है,
कर्त्तव्यों का ध्यान है,
क्षमावान धनवान है,
मोक्ष मिले अरमान है।

तालबेहट 20/04/2020

स्वाश्रित बन

कहती प्रकृति स्वाश्रित बन,
दुःखी-पराश्रित है जीवन,
कर-सेवा में हो तन मन,
नौकर रख न, खो न धन
कहती प्रकृति स्वाश्रित बन॥ 1॥

कार्य करो नित, रहो मगन
न्याय-नीति से आता धन,
मेहनत हो, वन रहे भवन,
कहती प्रकृति स्वाश्रित बन॥ 2॥

छोड़े परिश्रम, आलसी बन,
भोग-भोग में जाये मन,
मात्र पाप ही मिलता गम,
कहती प्रकृति स्वाश्रित बन॥ 3॥

छेड़-छाड़ न जल व वन,
नहीं प्रदूषण करो स्व-जन,
आपद् आती तन मन धन,
कहती प्रकृति स्वाश्रित बन॥ 4॥

स्वदेशी वस्तु संतोषी मन,
खाना मोटा, मोटा अन्न,
कर्ज नहीं स्व-निर्भर बन
कहती प्रकृति स्वाश्रित बन॥ 5॥

ज्ञान मात्र न हो जीवन,
अल्प-ज्ञान हो भला चरण,
दान गुप्त, न लोभी मन,
कहती प्रकृति स्वाश्रित बन॥ 6॥

बहे रात-दिन यथा पवन,
धर्म-कार्य में सदा लगन,
करें प्रशंसा जग-जन-जन,
कहती प्रकृति स्वाश्रित बन॥ 7॥

जंगल हो या रहे भवन,
वीतराग में करो रमण,
होय सफल सारा जीवन,
कहती प्रकृति स्वाश्रित बन॥ 8॥

30/04/2020

तालबेहट

काश!

''काश! विदेह में मैं होता,
तीर्थंकर दर्शन होता।''

दिव्यध्वनि का रस लेता,
अमृत-सा सुख पा लेता,
सोया भाग्य जगा लेता,
काश! विदेह में मैं होता,
तीर्थंकर दर्शन होता॥ 1॥

रागी-भेष न जहँ दिखता,
मिथ्या-मत भी न लखता,
क्षायिक समकित मैं गहता,
काश! विदेह में मैं होता,
तीर्थंकर दर्शन होता ॥ 2॥

कल्याणक को नित लखता,
सुर-सेवा जँह मैं लखता,
जिनेन्द्र-पद नुति मैं करता,
काश! विदेह में मैं होता,
तीर्थंकर दर्शन होता॥ 3॥

चारण-मुनि सेवा करता,
ऋद्धि-ऋषि पद रज गहता,
मोक्ष-सुमार्ग को अपनाता,
काश! विदेह में मैं होता,
तीर्थंकर दर्शन होता॥ 4॥

श्रुत-केवली को पाता,
मुनिवन श्रुत में रम जाता,
द्वादशांग को अपनाता,
काश! विदेह में मैं होता,
तीर्थंकर दर्शन होता॥ 5॥

आतापन आदिक धरता,
ध्यानामृत निर्झर झारता,
अपूर्व निर्जरा को पाता,
काश! विदेह में मैं होता,
तीर्थंकर दर्शन होता॥ 6॥

घोर-परिषह जहँ सहता,
उपसर्गों में सम धरता,
केवलज्ञानी बन जाता,
काश! विदेह में मैं होता,
तीर्थंकर दर्शन होता॥ 7॥

गुणस्थान पार जाता,
परम-विदेही बन जाता,
देह छोड़ शिव को पाता,
काश! विदेह में मैं होता,
शिवपद पा फिर न आता॥ 8॥

02/05/2020
तालबेहट

निज

निज है आतम, चेतन जानो
ज्ञान दर्श मय जो होता।
देह नहीं निज, तन पुद्‌गल है,
पुद्‌गल तो जड़ ही होता॥

बँधा कर्म से अशुद्ध आत्मा,
भव में सुख-दुख मय होता।
कर्म-बंध से मुक्त आत्मा,
विशुद्ध निज का सुख लेता॥

रागी आत्मा भोग राग से,
अशुभ कर्म का बंध करे।
निज-आतम वह भोग त्याग से,
कर्म-बंध से मुक्त बने॥

कनक तपे जब तेज आग पर,
छोड़ कालिमा, पीत बने।
ध्यानि निजातम ध्यान अग्नि से,
शुद्ध बने सब पाप गलें॥

कर्मों की बेड़ी भव में ही,
बाँधे रहती निज को ही।
शुद्ध-ध्यान के तीक्ष्ण अस्त्र से,
कटें बेड़ि निज की सब ही॥

भव के सुख दुख निज आतम से,
सदा दूर होते जानो।
निज ही निज से निज का निज में,
सुख पाता चेतन मानो॥

जग में चेतन, निज में चेतन,
शिव में भी चेतन जानो।
निज चेतन का खेल जगत् है,
कर्म-मुक्त निज शिव मानो॥

निज ने निज को निज के द्वारा,
निज पाने को, निज से ही,
निज का निज में ध्यान किया फिर
शाश्वत हुआ जु निज सो ही॥

10/05/2020
तालबेहट

निज का ध्यानी

जिन पर श्रद्धा जो करता।
निज पाने शिवपथ गहता॥

जिन का ध्यानी जिन बनता।
निज का ध्यानी निज रमता॥

जिन से निज तक जो जाता।
निज से वह न हट पाता॥

जिन-सम वह भी बन जाता।
घृतसम बन गुण महकाता॥

पर न साथ में ले जाता।
अपना निज ही संग जाता॥

ज्ञान, दर्श का है नाता।
ऐसी जिनवर की गाथा॥

जड़-तन यहीं बिखर जाता।
निज, पिंजड़े से उड़ जाता॥

निज से निज को ही पाता।
पर से फिर न कुछ नाता॥

निज का सुख निज में पाता।
पर न उसे कभी भाता॥

घृत न दुग्ध में फिर आता।
निज भी अक्षय सुख पाता॥

शाश्वत सुख को निज पाता।
पुनः लौट न भव आता॥

लोक-शिखामणि कहलाता।
त्रिभुवन से पूजा जाता॥

11/05/2020
तालबेहट

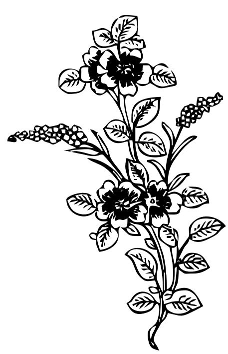

जिन

जिन-सम जित हो,
जिनेन्द्र बनो,
पाप, कषायों को धो दो॥

इन्द्र-इन्द्रियाँ
जीते जो,
जितेन्द्रिय होता पूज्य अहो!

निज-श्रद्धा से,
जैन बनो,
हिंसक वृत्ति पूर्ण तजो।

जैन हो दृष्टि,
नेक रखो,
अनेकांत की सीख गहो।

जैन दर्श-सह,
चारित हो,
जैनीपन का पालन हो।

जैन कहो फिर,
व्यसन न हो,
जल गालन, दिन भोजन हो।

जिन का कहना,
न्याय रखो,
पाप-कर्म से दूर रहो।

न मिथ्यात्वी,
भाव रखो,
वीतराग भज, दर्श गहो।

ज्ञान न बेचो,
लोभ तजो,
निःस्वार्थी बन सेवा हो।

नहीं छलो बस,
मान तजो,
भेद-भाव तज, पूज्य भजो।

जिन-सम तुम भी,
ध्यान करो,
मुनि बन, भव को पार करो।

जिसका जीवन
जिन-मय हो,
जिनेन्द्र बन, शिव पाय अहो!

11/05/2020
तालबेहट

कृषि करो या ऋषि बनो।

आदि प्रभो का है संदेश,
कृषि करना उत्तम उपदेश,
उपजे धान्य से उदर भरो,
कृषि करो या ऋषि बनो।

कृषि प्रधान हमारा देश,
शाकाहारी है परिवेश,
दया-भाव सब जीव धरो,
कृषि करो या ऋषि बनो।

धोखा, लोभ न जीवन हो,
पशुधन का भी पालन हो,
भोजन शुद्ध, सु-भाव रखो,
कृषि करो या ऋषि बनो।

स्वदेश रहो, संग देशी हो,
नहीं वेश पर-देशी हो,
भौतिक-सुख से सदा बचो,
कृषि करो या ऋषि बनो।

कीट नाश न कभी करो,
अभय-दान को हृदय धरो,
करुणा से अन्तस् भर लो,
कृषि करो या ऋषि बनो।

धूप सहो व ठंड सहो,
वर्षा का संग्रह कर लो,
जल, ईंधन न व्यर्थ करो,
कृषि करो या ऋषि बनो।

मेहनत से न कभी डरो
सदा हवा के मित्र बनो,
निरोगता से युक्त रहो,
कृषि करो या ऋषि बनो।

हरियाली में खूब रहो,
हरा-भरा शुभ जीवन हो,
प्रभु-नाम जिन जाप जपो,
कृषि करो या ऋषि बनो।

11/05/2020
तालबेहट

जिन से निज

जिन में रम कर,
निज में खो जा।
निज में रम कर,
जिनवर बन जा॥

निज को निज में,
निज से पा जा।
निज का वैभव,
निज में पा जा॥

जिन का ध्यानी,
निज का बन जा।
जिन-सम बनकर,
भव से तिर जा॥

निज को पर से-
दूर हटा दे।
जिन-सम शक्ति,
निज में पा जा॥

भव से तिरकर,
शिव में बस जा।
अनंत सुख से,
शाश्वत् सज जा॥

जिन-सम मुक्ति,
तू भी पा जा।
निज-आत्मा से,
आत्म समा जा॥

11/05/2020
तालबेहट

जगत् शान्ति

शान्ति वरो हे! शांति प्रभो जिन, अशुभ, जगत् आपद् आयी।
एक तरफ कुआँ दिखता है, दूजी ओर दिखे खाई।
शान्तिनाथ जी आप शरण हैं, मिले शान्ति हो सुखदायी॥

कहीं तूफान सबक देता है, सुख-सुविधाएं बिखरायीं।
मिल-जुल रहना भाई सभी तुम, राह रोकना दुखदायी।
शान्तिनाथ जी आप शरण हैं, मिले शान्ति हो सुखदायी॥

भारी-रोग ने मार गिराया, जनता व्याकुल घबरायी।
रोजगार भी चौपट कीना, हालत नाजुक हुई भाई।
शान्तिनाथ जी आप शरण हैं, मिले शान्ति हो सुखदायी॥

अपने बिछुड़े पास न आते, सगे ढके मुख को भाई।
मंदिर छूटा पूजा छूटी, छूटे लेन-देन भाई।
शान्तिनाथ जी आप शरण हैं, मिले शान्ति हो सुखदायी॥

क्षेत्र दूर वे, साधु दूर वे, ज्ञान समस्या भी आयी।
शिक्षा-केन्द्र भी सूने पड़ गये, जोखिम पड़ गयी कमाई।
शान्तिनाथ जी आप शरण हैं, मिले शान्ति हो सुखदायी॥

जनम-मरण व नाते-रिस्ते, भय के कारण हैं भाई।
मात्र दूर से देखें करते-सेवा में भी भय भाई।
शान्तिनाथ जी आप शरण हैं, मिले शान्ति हो सुखदायी॥

सर्व जगत् में होय शान्ति बस, णमोकार जपना भाई।
भक्तामर व शांतिपाठ की, सीख गुरु ने बतलायी।
शान्तिनाथ जी आप शरण हैं, मिले शान्ति हो सुखदायी॥

22/05/2020
तालबेहट

श्रुत में रम

श्रुत-पंचमी
श्रुत में रम
मिटता गम
मिलता सम।

श्रु याने सुन
अंदर गुन
श्रुत को गुन
एक ही धुन।

त में लीन
हो तल्लीन
निज में लीन
हो स्वाधीन।

पन् से पञ्च
पाप को छोड़
व्रत को जोड़
जीवन मोड़।

च से चार
कषाय विसार
मोह को मार
संयम सम्हार।

मी से मीत
धर्म हो मीत
गुण गा गीत
बनो पुनीत।

प से पुण्य
दान हो पुण्य
तजो अपुण्य
हो जा धन्य।

र से रम
भक्ति में रम
मिटे सरम
कटें करम।

व से वर
उत्तम नर
शिव को वर
मोक्ष हो घर।

श्रुत से ज्ञान
ज्ञान का मान
चरित महान
निज का ध्यान।

सच्चा-ज्ञान
निज पहचान
हो उत्थान
मोक्ष महान।

ग्रंथ महान
गुरु महान
पर्व महान
करें प्रणाम।

27/05/2020
तालबेहट

दिगम्बर

दिक् है अम्बर
रहे दिगम्बर
अम्बर त्यागे
बने दिगम्बर
प्रकृति हि अम्बर
स्वयं दिगम्बर

यथा जात है
रूप दिगम्बर
भगवन्-सम हैं
पूज्य दिगम्बर
जिनको पूजें
रहे दिगम्बर।

नहीं वासना,
शुद्ध दिगम्बर
चाह न तन सुख
सत्य दिगम्बर
अशुभ ध्यान न
परम दिगम्बर।

साम्य भाव है
सौम्य दिगम्बर
अनियत वासी
सजग दिगम्बर
नहीं स्वार्थ कुछ
स्वस्थ दिगम्बर।

आडम्बर सब
त्याग दिगम्बर
भोग-विलास न
पास दिगम्बर
नहीं राग में
वास दिगम्बर।

परम दर्श जो
आदर्श दिगम्बर
ज्ञानवान जो
भगवान दिगम्बर
चरितवान सो
आचार दिगम्बर।

परम लक्ष्य शिव
सिद्ध दिगम्बर
शीलवान शुभ
भाव दिगम्बर
पर-उपकार
स्वोपकार दिगम्बर।

ध्यान-साधना
साध्य दिगम्बर
भव-वैरागी
श्रमण दिगम्बर
पूजित जीवन
नमन् दिगम्बर

28/05/2020
तालबेहट

खिले कमल

खिले कमल
बनो विमल
पंक नहीं, गुण करो अमल।
बनो सरल
रहो तरल
नहीं कठिन, अब बन कोमल।
बनो सबल
न दुर्बल
सदा बढ़ाओ आतम बल।
नहीं जगत् से
करना छल
अपना मानो, दो सम्बल।
हो निर्मल,
न दल-दल
ऊपर होता यथा कमल।
पर में न निज
कभी बदल
शुक्ल मेघ-सम रहो धवल।
कठनाइयों में
न हो चल
सत्य राह हो रहो सफल।
वीतराग के
मग में ढल
मोक्ष मिलेगा उत्तम फल।

29/05/2020
तालबेहट

जिनेन्द्र प्रभु का दर्श

तालबेहट का ताल बड़ा,
कमलों का वन जहाँ खिला,
गगन चुम्बि है बना किला,
जिन-मंदिर प्राचीन कुँआ
जिनेन्द्र प्रभु का दर्श हुआ।

मूल पार्श्व-जिन मंदिर में
मुनि वसते जिन-परिसर में,
जैनों में भक्ति-भाव भरा,
साधु सु-योग में हर्ष हुआ,
जिनेन्द्र प्रभु का दर्श हुआ।

सोनागिरि, पावागिरि जाते,
यतिगण सबका पुण्य जगाते।
गुरु-दर्शन व वाणी सुनलो,
भक्ति बिन न काल गवाँ,
जिनेन्द्र प्रभु का दर्श हुआ।

आदिनाथ की प्रतिमा प्यारी,
अति प्राचीन जगत् में न्यारी,
प्रतिहार्य सह-इन्द्र पूजते,
जगत् सुखी हो करें दुआ,
जिनेन्द्र प्रभु का दर्श हुआ।

कोरोना का संकट आया,
नहीं नगर को छू वह पाया,
साधु संघ ने पुण्य बढ़ाया,
प्रभु अतिशय यह यहाँ हुआ,
जिनेन्द्र प्रभु का दर्शन हुआ।

स्वार्थी-अतिथि

नाम ख्याति के लोभी कोई
अतिथि मंच पर आते हैं,
साधु संघ का बहुमूल्य वह,
समय व्यर्थ करवाते हैं।

गुरुगुण न, निज गुण गाकर,
गुरु-आदर न दिखाते हैं,
ढोल शोर अधिक मचाते,
ताली जयकार करवाते हैं

माईक, माला, मंच के लोभी,
सम्मान बहुत करवाते हैं,
गुरु-वाणी को सुने बिना ही,
अपनी वाणी सुनाते हैं।

आत्म-प्रशंसक स्वार्थी अतिथि,
सभा-जन में न भाते हैं,
कुछ लोगों को स्वयं साथ ले,
मध्य में ही चले जाते हैं।

पूज्य पुरुषों के शिक्षा सूत्र बिन,
आशीष बिना ही जाते हैं,
आगे अपना मार्ग बंद कर,
जग को कभी न भाते हैं।

स्वार्थी वे कहलाते हैं।
स्वार्थी वे कहलाते हैं।

ललितपुर वर्षायोग 2020

साधना-प्रभावना

गुरु संघ में सत् साधना हो।
मात्र प्रभावना न, भावना हो॥

साधना का नाम है रटता।
बाह्य प्रभावना भाव जो रखता॥
बिना साधना भावना से,
स्वयं पुण्य को कम है करता॥

गुरु संघ से दूर जब हो,
साधना से दूर भी हो।
बाहरी उस प्रभावना से,
रत्नत्रय से बाह्य भी हो॥

ताम-झाम व आडम्बर में,
मोह-माया व परिग्रह में,
दल-दल में फंस जाता है।
चिंताओं में दुःख पाता है।

मात्र व्यवहार भीड़-भाड़ में,
लौकिकता के व्यर्थ प्रभाव में,
साधुपने से परे भी हो।
अप्रभावना में भी रत हो॥

गुरु उपदेशों व संकेतों को,
जो जीवन में अपनाता है,
वही साधक निज जीवन में,
प्रभावना का सुख पाता है॥

ललितपुर वर्षायोग 2020

वर्षायोग कहाँ होगा?

हरा-भरा जीवन होगा,
वर्षायोग वहाँ होगा।

प्रासुक भी परिसर होगा,
वर्षायोग महा होगा।

श्रावक पुण्य बड़ा होगा,
वर्षायोग शुभं होगा।

ज्ञान-ध्यान में मन होगा,
वर्षायोग सुखद होगा।

दान-पुण्य-धर्म होगा,
वर्षायोग सुगम होगा।

पूजा-भक्ति में तन होगा,
वर्षायोग सजग होगा।

गुरु-सेवा जीवन होगा,
वर्षायोग सविनय होगा।

निःस्वार्थी मानव होगा,
वर्षायोग उन्नत होगा।

शालीनता का ढंग होगा,
वर्षायोग लवलीन होगा।

संयम मय जीवन होगा,
वर्षायोग निष्पृह होगा।

निरोगी स्वस्थ वतन होगा,
वर्षायोग प्रसन्न होगा।

जीव बचें जीवन होगा,
वर्षायोग अभय होगा।

धर्म-प्रभावना-पन होगा,
वर्षायोग उमंग होगा।

गुरुकृपा इच्छुक होगा,
वर्षायोग वरद होगा।

गृह पावन गुरु से होगा,
वर्षायोग अजब होगा।

अशुभ कर्म को जो धोगा,
वर्षायोग पावन होगा।

त्याग, वैराग्य में जो खोगा,
वर्षायोग सरस होगा।

मोक्षमार्ग-मय जो होगा,
वर्षायोग सफल होगा।

ललितपुर वर्षायोग 2020

।।श्री वीतरागाय नमः।।

ध्यान दें ध्यान दें ध्यान दें

क्या आप अपने पास धर्म का खजाना भरना चाहते हैं?

प.पू. धर्म प्रभावक वात्सल्य मूर्ति आचार्य श्री आर्जवसागर

जी महाराज की वाणी सुनें और देखें-

कक्षाएँ

- इष्टोपदेश
- द्रव्यसंग्रह
- रत्नकरंडक श्रावकाचार
- प्रश्नोत्तर रत्नमालिका
- तत्त्वार्थ सूत्र
- समाधितन्त्र
- स्वयंभू स्तोत्र
- तीर्थोदय काव्य
- भावना द्वात्रिंशतिका

प्रवचन

● शिक्षा ● संस्कृति ● अहिंसा ● लक्ष्य ● ध्यान ● सम्यग्दर्शन

●सम्यक् ध्यान शतक ● धर्म भावना शतक ● पर्युषण पर्व ● षोडश कारण भावनाओं आदि पर मंगल प्रवचन

विशेष- आचार्य श्री के सभी चातुर्मास स्थलों पर हुए सांस्कृतिक कार्यक्रमों के वीडियो भी उपलब्ध हैं।

★ललितपुर में हुआ लोक कल्याण विधान भी चैनल में अपलोड है।★

इसके लिए क्या करें तो-

aarjav vani चैनल को सब्सक्राइब करें। Subscribe

संपर्क सूत्र:- **9174843674, 9425601161,7415641524**

कृतिगुण

'सदाचार सूक्ति काव्य' एक अनूठी कृति जिसमें छंद मुक्त एवं एक विधा रूप काव्यों में आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज द्वारा ज्ञान, ध्यान, योग, स्वास्थ्य, सामाजिक, सम्यक् व्यवहार और प्रकृति जैसे विषयों पर 631 पद्यों में शिक्षाप्रद और आचरण परख विवेचन किया है तथा अनेक कहावतों और लोकोक्तियों के भावों को अपनी कविता रूपी मणिमाला में पिरो दिया है जिस कारण नीरस बातें भी सरसता को प्राप्त करते हुए लोगों को मनभावन बन गई हैं। ऐसे अद्वितीय काव्य को पढ़कर निश्चित रूप में मानव का मन सदाचार की ओर अवश्य ही आकृष्ट होगा। ऐसी कृति सबके मन को अध्यात्म की ओर मोड़ेगी एवं मानसिक शांति भी प्रदान करेगी।

हमारी परंपरा के प्रथमाचार्य

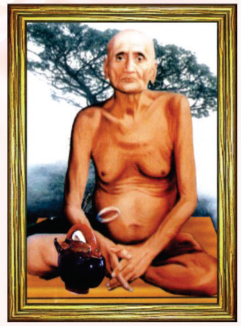

चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री 108 शांतिसागरजी महाराज

हमारे दीक्षा गुरु

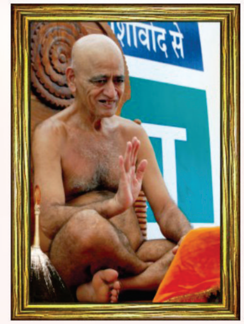

संत शिरोमणी आचार्यश्री 108 विद्यासागरजी महाराज

आचार्य पद प्रदाता

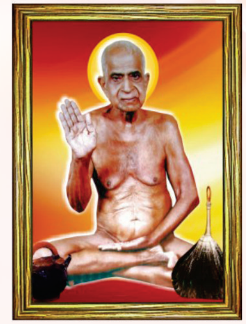

आचार्यश्री 108 सीमंधरसागरजी महाराज

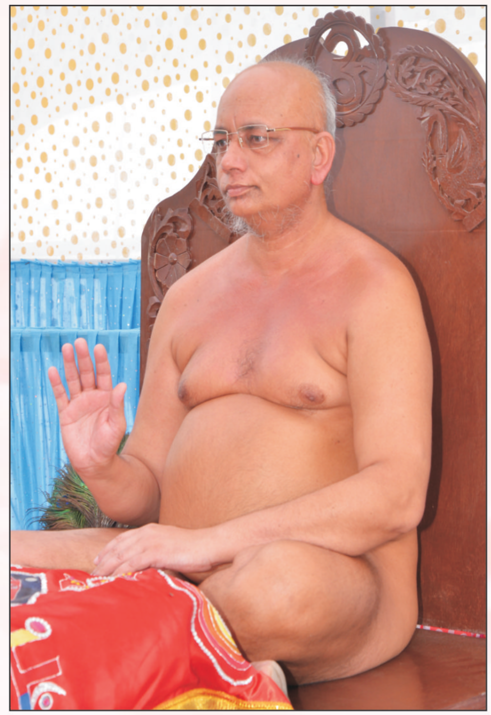

आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज

जन्म : 11.09.1967, मुनिदीक्षा : 31.03.1988
आचार्य पद : 25.01.2015